शोध दिशा

वर्ष 5-6 अंक 4-1 अक्टूबर 1012-मार्च 2013 40 रुपए

संपादकीय कार्यालय
हिंदी साहित्य निकेतन
16 साहित्य विहार, बिजनौर 246701 (उ०प्र०)
फ़ोन : 01342-263232, 07838090732
ई-मेल : giriraj 3100@gmail.com
वैब साइट : www.hindisahityaniketan.com

क्षेत्रीय कार्यालय
दिल्ली एन०सी०आर०
डॉ० अनुभूति भटनागर
सी-106, शिव कला अपार्टमेंट्स
बी 9/11, सैक्टर 62, नोएडा
फ़ोन : 09928570700

गुड़गाँव कार्यालय
डॉ० मीना अग्रवाल
एफ़-403, पार्क व्यू सिटी-2
सोहना रोड, गुड़गाँव (हरियाणा)
फ़ोन : 0124-4076565, 07838090732

राजस्थान
राहुल भटनागर
डी-101 पर्ल ग्रीन एकड़, श्री गोपालनगर
सोमानी अस्पताल के पास, गोपालपुरा बाई पास
जयपुर (राज०)
फ़ोन : 08233805777

(सभी पद मानद एवं अवैतनिक हैं।)

संपादक
डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल

प्रबंध संपादक
डॉ० मीना अग्रवाल

संयुक्त संपादक
मनोज अबोध
सत्यराज

कला संपादक
गीतिका गोयल 09582845000
डॉ० अनुभूति 09928570700

उपसंपादक
डॉ० अशोक कुमार 09557746346

विधि परामर्शदाता
अनिलकुमार जैन, एडवोकेट

आर्थिक परामर्शदाता
ज्योतिकुमार अग्रवाल, सी०ए०

चित्रकार
डॉ० आर०के० तोमर
देवेंद्र शर्मा
अतुलवर्धन

शुल्क
आजीवन शुल्क : एक हज़ार पाँच सौ रुपए
वार्षिक शुल्क : एक सौ पचास रुपए
एक प्रति : चालीस रुपए
विदेश में : पंद्रह यू०एस०डॉलर (वार्षिक)

प्रकाशित सामग्री से संपादकीय सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका से संबंधित सभी विवाद केवल बिजनौर स्थित न्यायालय के अधीन होंगे। शुल्क की राशि 'शोध दिशा' बिजनौर के नाम भेजें।

स्वत्वाधिकारी 'हिंदी साहित्य निकेतन' की ओर से स्वत्वाधिकारी, मुद्रक प्रकाशक डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल द्वारा श्री लक्ष्मी ऑफसैट प्रिंटर्स, निकट ज्योतिष भवन, बिजनौर 246701 से मुद्रित एवं 16 साहित्य विहार, बिजनौर (उ०प्र०) से प्रकाशित। पंजीयन संख्या : UP HIN 2008/25034

संपादक : डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल

संरक्षक

रो॰ असित मित्तल, नोएडा
श्री अजय रस्तोगी, मेरठ
श्री निश्चल रस्तोगी, मेरठ
श्री अनिलकुमार गोयल, नोएडा
रो॰ आर॰के॰ जैन, बिजनौर
डॉ॰ धैर्य विश्नोई, बिजनौर
डॉ॰ प्रकाश, बिजनौर
रो॰ राजीव रस्तोगी, मुरादाबाद
रो॰ नीरज अग्रवाल, मुरादाबाद
रो॰ राकेश सिंहल, मुरादाबाद
श्री महेश अग्रवाल, मुरादाबाद
श्रीमती ताराप्रकाश, मुज़फ़्फ़रनगर
रो॰ परमकीर्तिसरन अग्रवाल, मु॰न॰
रो॰ देवेंद्रकुमार अग्रवाल, (काशी विश्वनाथ स्टील्स, काशीपुर)
श्री प्रमोदकुमार अग्रवाल, (नैनी पेपर्स, काशीपुर)
श्री अमितप्रकाश, मुज़फ़्फ़रनगर
रो॰ नीरज अग्रवाल, जयपुर
श्री सत्येंद्र गुप्ता, नजीबाबाद
श्री अशोक अग्रवाल, गुड़गाँव

आजीवन सदस्य

रो॰ आर॰ के॰ साबू, चंडीगढ़
रो॰ सुशील गुप्ता, नई दिल्ली
रो॰ एम॰एल॰ अग्रवाल, दिल्ली
डॉ॰ मनोजकुमार, दिल्ली
श्री प्रवीण शुक्ल, दिल्ली
डॉ॰ दीप गोयल, दिल्ली
श्री आशीष कंधवे, दिल्ली
श्री अविनाश वाचस्पति, दिल्ली
पावर फाइनेंस कारपोरेशन (इं) लि॰

उत्तर प्रदेश

रो॰ डॉ॰ के॰ सी॰ मित्तल, नोएडा
श्री सुभाष गोयल, नोएडा
श्री ओमप्रकाश यति, नोएडा
डॉ॰ कुँअर बेचैन, ग़ाज़ियाबाद
डॉ॰ अंजु भटनागर, ग़ाज़ियाबाद
डॉ॰ मिथिलेश रोहतगी, ग़ाज़ियाबाद
डॉ॰ मंजु शुक्ल, ग़ाज़ियाबाद
डॉ॰ मिथिलेश दीक्षित, शिकोहाबाद
डॉ॰ पल्लवी दीक्षित, शिकोहाबाद
रो॰ डॉ॰ एस॰के॰ राजू, हाथरस
श्री दिनेशचंद्र शर्मा, मोदीनगर
श्री एस॰सी॰ संगल, बुढ़ाना
डॉ॰ नीरू रस्तोगी, कानपुर
श्री विनोदकुमार गोयल, दादरी
श्री अलीहसन मकरैंडिया, दादरी
डॉ॰ प्रणव शर्मा, पीलीभीत
श्रीमती पिंकी चतुर्वेदी, वाराणसी
श्री अरविंदकुमार, जालौन
नेशनल थर्मल पावर कारपोरेशन
डॉ॰ राकेश शरद, आगरा
डॉ॰ राकेश सक्सेना, एटा
श्री अरविंदकुमार, मोहदा (हमीरपुर)
श्री गोपालसिंह, बेलवा (जौनपुर)
डॉ॰ रामसनेहीलाल शर्मा, फिरोजाबाद
श्री दिनेश रस्तौगी, शाहजहाँपुर
श्री भूदेव शर्मा, नोएडा
श्री इंद्रप्रसाद अकेला, मुरादनगर

खुरजा (उ॰प्र॰)

श्रीमती उषारानी गुप्ता
रो॰ राकेश बंसल
रो॰ डॉ॰ दिनेशपाल सिंह
रो॰ प्रेमप्रकाश अरोड़ा
रो॰ सुनील गुप्ता आदर्श

जे॰पी॰ नगर

रो॰ अभय आनंद रस्तोगी, हसनपुर
रो॰ डॉ॰ विनोदकुमार अग्रवाल, हसनपुर
रो॰ डॉ॰ सरल राघव, अमरोहा
डॉ॰ बीना रुस्तगी, अमरोहा
रो॰ शिवकुमार गोयल, धनौरा
रोटरी क्लब, भरतियाग्राम

अफजलगढ़ (बिजनौर)

रो॰ रविशंकर अग्रवाल
रो॰ अतुलकुमार गुप्ता
रो॰ महेंद्रमानसिंह शेखावत
श्री वासुदेव सरीन
श्री हंसराज सरीन
श्री अमृतलाल शर्मा
श्री सुरेशकुमार

चाँदपुर (बिजनौर)

डॉ॰ मुनीशप्रकाश अग्रवाल
श्री सुरेंद्र मलिक
गुलाबसिंह हिंदू महाविद्यालय
डॉ॰ बलराजसिंह, बाष्टा (बिजनौर)
श्री विपिनकुमार पांडेय

धामपुर (बिजनौर)

डॉ॰ लालबहादुर रावल
श्री जे॰पी॰ शर्मा, शुगर मिल
डॉ॰ सरोज मार्कण्डेय
डॉ॰ शंकर क्षेम
श्री नरेंद्रकुमार गुप्त
श्रीमती सुषमा गौड़
डॉ॰ मिथिलेश माहेश्वरी
रो॰ शिवओम अग्रवाल
डॉ॰ वीरेंद्रकुमार शर्मा
डॉ॰ कृष्णकांत चंद्रा
डॉ॰ श्रीमती संहिता शर्मा
डॉ॰ पूनम चौहान
डॉ॰ भानु रघुवंशी
डॉ॰ ख़ालिदा तरन्नुम
श्री आर्यभूषण गर्ग
श्री संजय जैन
श्री निशिवेशसिंह एडवोकेट
श्री दीपेंद्रसिंह चौहान
मौ॰ सुलेमान, परवेज़ अनवर, शेरकोट
कुँ॰ निहालसिंह, दुर्गा पब्लिक स्कूल
प्राचार्य, आर॰एस॰एम॰ (पी॰जी॰)कालेज
प्राचार्या, एस॰बी॰डी॰ महिला कालेज
राधा इंटर कालेज, अल्हेपुर (धामपुर)
धामपुर पब्लिक कन्या इंटर कालेज

नगीना (बिजनौर)

श्री पंकजकुमार, पो॰ भोगली
श्री करनसिंह, पो॰ भोगली
श्री पंकजकुमार अग्रवाल
श्री मुनमुन अग्रवाल
डॉ॰ वारिस लतीफ
श्री ओमवीर सिंह

नजीबाबाद (बिजनौर)

श्री इंद्रदेव भारती
डॉ॰ रासुलता

बरेली (उ॰प्र॰)

रो॰ डॉ॰ आई॰एस॰ तोमर
रो॰ रविप्रकाश अग्रवाल
रो॰ डॉ॰ रामप्रकाश गोयल
डॉ॰ सविता उपाध्याय
डॉ॰ महाश्वेता चतुर्वेदी
रो॰ पी॰पी॰ सिंह
डॉ॰ अशोक उपाध्याय
रो॰ श्यामजी शर्मा
श्री विशाल अरोड़ा

डॉ॰ वाई॰एन॰ अग्रवाल
श्री राजेंद्र भारती
डॉ॰ देवेंद्राकुमारी झा

बिजनौर (उ॰प्र॰)

श्री राजकमल अग्रवाल
डॉ॰ बलजीत सिंह
रो॰ रमेश गोयल
रो॰ विज्ञानदेव अग्रवाल
श्रीमती शशि जैन
डॉ॰ मोनिका भटनागर
डॉ॰ ओमदत्त आर्य
श्री जोगेंद्रकुमार अरोरा
श्री चंद्रवीरसिंह गहलौत, एडवोकेट
रो॰ आर॰डी॰ शर्मा
डॉ॰ निकेता
डॉ॰ अजय जनमेजय
श्री पुनीत अग्रवाल
डॉ॰ निरंकारसिंह त्यागी
श्री अशोक निर्दोष
श्री वी॰पी॰ गुप्ता
रो॰ प्रदीप सेठी
रो॰ हरिशंकर गुप्ता
रो॰ सी॰पी॰ सिंह
डॉ॰ तिलकराम, वर्धमान कॉलेज
आर॰बी॰डी॰महिला महाविद्यालय
रो॰ डॉ॰ रजनीशचंद्र ऐरन, हल्दौर
श्री अरुण गोयल, किरतपुर
रो॰ डॉ॰ दीपशिखा लाहौटी, नगीना
रो॰ बी॰के॰ मालपानी, स्योहारा
डॉ॰ हेमलता देवी, गोहावर
नहटौर डिग्री कालेज, नहटौर
श्री विवेक गुप्ता, शादीपुर

मवाना (उ॰प्र॰)

रो॰ अनुराग दुबलिश
श्री अंबरीशकुमार गोयल
आर्य कन्या इंटर कालेज
ए॰एस॰ इंटर कालेज
लक्ष्मीदेवी आर्य कन्या डिग्री कालेज

मुज़फ़्फ़रनगर (उ॰प्र॰)

रो॰ शरद अग्रवाल
रो॰ वीरेंद्र अग्रवाल
रो॰ दिनेशमोहन
रो॰ डॉ॰ ईश्वर चंद्रा
रो॰ डॉ॰ अमरकांत
रो॰ अनिल सोबती
रो॰ डॉ॰ जे॰के॰ मित्तल
रो॰ सुधीरकुमार गर्ग
रो॰ प्रदीप गोयल
श्री गौरव प्रकाश
डॉ॰ बी॰के मिश्रा
रो॰ राकेश वर्मा
रो॰ संजीव गोयल
प्राचार्य, एस॰डी॰ कालेज ऑफ लॉ
प्रधानाचार्य, ग्रेन चेम्बर्स पब्लिक स्कूल
रो॰ संजय जैन, शामली
रो॰ डॉ॰ कुलदीप सक्सेना, शामली
रो॰ उमाशंकर गर्ग, शामली
रो॰ डॉ॰ सुनील माहेश्वरी, शामली
श्री अतुलकुमार अग्रवाल, खतौली

मुरादाबाद (उ॰प्र॰)

रो॰ सुधीर गुप्ता, एडवोकेट
रो॰ बी॰एस॰ माथुर
रो॰ ललितमोहन गुप्ता
रो॰ सुरेशचंद्र अग्रवाल
श्री शचींद्र भटनागर
रो॰ योगेंद्र अग्रवाल
रो॰ नीरज अग्रवाल
रो॰ के॰के॰ अग्रवाल
रो॰ श्रीमती सरिता लाल
रो॰ श्रीमती चित्रा अग्रवाल
डॉ॰ महेश 'दिवाकर'
रो॰ ए॰एन॰ पाठक
रो॰ चक्रेश लोहिया
रो॰ यशपाल गुप्ता
रो॰ सुधीर खन्ना
रो॰ रमित गर्ग
श्री विनोदकुमार
डॉ॰ रामानंद शर्मा
डॉ॰ पल्लव अग्रवाल
श्री राजेश्वरप्रसाद गहोई
श्री विश्वअवतार जैमिनी
श्रीमती कनकलता सरस
श्री योगेंद्रकुमार
श्री हरीश गर्ग, संभल
श्री वीरेंद्र गोयल, संभल
श्री नितिन गर्ग, संभल
रो॰ डॉ॰ राकेश चौधरी, चंदौसी

मेरठ (उ॰प्र॰)

रो॰ ओ॰पी॰सपरा
रो॰ विष्णुशरण भार्गव
रो॰ एम॰एस॰ जैन
रो॰ गिरीशमोहन गुप्ता
रो॰ डॉ॰ हरिप्रकाश मित्तल
रो॰ प्रणय गुप्ता
डॉ॰ आर॰के॰ तोमर
रो॰ संजय गुप्ता
श्री किशनस्वरूप
रो॰ नरेश जैन
रो॰ सागर अग्रवाल
डॉ॰ अनिलकुमारी
रो॰ प्रदीप सिंहल
श्री शिवानंद सिंह 'सहयोगी'
रो॰ नवल शाह
डॉ॰ रामगोपाल भारतीय
श्रीमती बीना अग्रवाल
श्रीमती मृदुला गोयल
रो॰ मुकुल गर्ग
श्री सियानंद सिंह त्यागी
श्री राकेश चक्र
रो॰ सी॰पी॰ रस्तौगी
डॉ॰ ज्ञानेदत्त हरित

रामपुर (उ॰प्र॰)

श्री शांतनु अग्रवाल
श्री नरेशकुमार सिंघल
डॉ॰ मीना महे

लखनऊ (उ॰प्र॰)

श्री महेशचंद्र द्विवेदी, आई॰पी॰एस॰
श्री दामोदरदत्त दीक्षित
डॉ॰ किरण पांडेय
श्री अनुपम मित्तल
श्रीमती रेणुका वर्मा
श्रीमती उषा गुप्ता
श्री अमृत खरे
श्री विनायक भूषण

सहारनपुर (उ॰प्र॰)

डॉ॰ विपिनकुमार गिरि
श्री श्रीपाल जैन ठेकेदार
श्री पूर्णसिंह सैनी, बेहट
श्री विनोद 'भृंग'
एम॰एल॰जे॰खेमका गर्ल्स कालेज

उत्तराखंड

डॉ॰ आशा रावत, देहरादून
डॉ॰ राखी उपाध्याय, देहरादून
श्री अमीन अंसारी, जसपुर

श्री विपिनकुमार बक्शी, कोटद्वार
डॉ॰ अर्चना वालिया, कोटद्वार
धनौरी डिग्री कालेज, धनौरी
नेशनल इंटर कालेज, धनौरी

रुड़की

डॉ॰ अनिल शर्मा
श्री प्रेमचंद गुप्ता
श्री अविनाशकुमार शर्मा
श्री वासुदेव पंत
श्री मयंक गुप्ता
श्री अमरीष शर्मा
श्री उमेश कोहली
श्री जे॰पी॰ शर्मा
श्री मनमोहन शर्मा
श्री सुनील साहनी
श्री अशोक शर्मा 'आर्य'
श्री मेनपालसिंह
श्री संजय प्रजापति
श्री ओमदत्त शर्मा
श्री अरविंद शर्मा
श्री राजेश सिंहल
श्री ब्रिजेश गुप्ता
श्री संजीव राणा
श्री ऋषिपाल शर्मा
श्री राजपाल सिंह
बी॰एस॰एम॰इंटर कालेज,
आनंदस्वरूप आर्य सरस्वती विद्या मंदिर
योगी मंगलनाथ सरस्वती विद्या मंदिर
शिवालिक पब्लिक स्कूल, डंडेरा

काशीपुर

श्री समरपाल सिंह
श्री प्रमोदकुमार अग्रवाल
रो॰ डॉ॰ वी॰एम॰ गोयल
रो॰ डॉ॰ एस॰पी॰ गुप्ता
रो॰ डॉ॰ डी॰के॰ अग्रवाल
रो॰ डॉ॰ एन॰के॰ अग्रवाल
रो॰ डॉ॰ रविनंदन सिंघल
रो॰ विजयकुमार जिंदल
रो॰ जितेंद्रकुमार
रो॰ प्रदीप माहेश्वरी
रो॰ रवींद्रमोहन सेठ
श्री प्रमोदसिंह तोमर

आंध्र, कर्नाटक, केरल, मिज़ोरम

श्री अनंत काबरा, हैदराबाद
श्री श्याम गोयनका, बैंगलौर
डॉ॰ दीपा के॰, बैंगलोर (कर्नाटक)
डॉ॰ एन॰ चंद्रशेखरन नायर, केरल
निदेशक विश्व व्यापक हिंदी संचार केंद्र
आइजॉल

तमिलनाडु

डॉ॰ बी॰ जयलक्ष्मी, चेन्नई
डॉ॰ पी॰आर॰ वासुदेवन शेष, चेन्नई
श्री एन॰ गुरुमूर्ति, चेन्नई
सुश्री प्रतिभा मलिक, चेन्नई
सुश्री अपराजिता शुभ्रा, चेन्नई
श्री योगेशचंद्र पांडेय, चेन्नई
श्री महेंद्रकुमार सुमन, चेन्नई
श्री संजय ढाकर, चेन्नई
श्री प्रदीप साबू, चेन्नई
सुश्री स्वर्णज्योति, पांडिचेरी

पंजाब

रो॰ विजय गुप्ता, राजपुरा
कर्नल तिलकराज, जालंधर
श्री सागर पंडित, अमृतसर

उड़ीसा

श्री श्यामलाल सिंहल, राउरकेला

मध्य प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़

रो॰ रविप्रकाश लंगर, उज्जैन
डॉ॰ हरीशकुमार सिंह, उज्जैन
डॉ॰ अशोक भाटी, उज्जैन
श्री माणिक वर्मा, भोपाल
श्री प्रदीप चौबे, ग्वालियर
श्री उमाशंकर मनमौजी, भोपाल
श्री जगदीश जोशीला
श्री विनोदशंकर शुक्ल, रायपुर
श्री रामेश्वर वैष्णव
श्री गजेंद्र तिवारी, बागबाहरा
श्री धीरेंद्रमोहन मिश्र, लक्खीसराय

महाराष्ट्र, गुजरात

रो॰ सज्जन गोयनका, मुंबई
श्री जावेद नदीम, मुंबई
रो॰ डॉ॰ माधव बोराटे, पुणे
श्रीमती रिज़वाना कश्यप, पुणे
रो॰ सुरेश राठौड़, मुंबई
डॉ॰ अश्विनीकुमार 'विष्णु', अमरावती
डॉ॰ शैलजा सुरेश माहेश्वरी, अमलनेर
श्री मधुप पांडेय, नागपुर
श्री सुभाष काबरा
श्री अरुणा अग्रवाल, पुणे
श्री सागर खादीवाला, नागपुर
डॉ॰ मिर्ज़ा एच॰ एम॰, सोलापूर
श्री वनराज आर्ट्स, कॉमर्स कालेज,
धरमपुर (बलसाड)
श्री मोरारजी देसाई आर्ट्स एंड कॉमर्स
कालेज, वीरपुर (तापी)

राजस्थान

रो॰ डॉ॰ अशोक गुप्ता, जयपुर
रो॰ अजय काला, जयपुर
श्री कमल कोठारी, जयपुर
रो॰ विवेक काला, जयपुर
श्री आर॰सी॰ अग्रवाल, जयपुर
श्री राजीव सोगानी, जयपुर
श्री सुरेश सबलावत, जयपुर
श्री कमल टोंगिया, जयपुर
श्री मुकेश गुप्ता, जयपुर
श्री विनोद गुप्ता, जयपुर
श्री गिरधारी शर्मा, जयपुर
रो॰ एस॰के॰ पोद्दार, जयपुर
रो॰ राजेंद्र सांघी, जयपुर
रो॰ आर॰पी॰ गुप्ता, जयपुर
श्री जयपुर चेंबर ऑफ़ कॉमर्स एंड इंड॰
डॉ॰ शंभुनाथ तिवारी, भीलवाड़ा
डॉ॰ दयाराम मैठानी, भीलवाड़ा
श्री मुरलीमनोहर बासोतिया, नवलगढ़

हरियाणा

श्री विकास, तहसील महम, रोहतक
डॉ॰ स्नेहलता, रोहतक
डॉ॰ सुदेशकुमारी, जींद
श्री हरिदर्शन, सोनीपत
डॉ॰ प्रवीनबाला, जुलाना मंडी
श्रीमती अनिलकुमारी, घिलौड़ कलाँ
डॉ॰ प्रवीणकुमार वर्मा, फरीदाबाद
श्रीमती रेखारानी, फरीदाबाद
श्रीमती सविताकुमारी, सोनीपत
श्रीमती सुमनलता, रोहतक
श्री सुरेशकुमार, भिवानी
डॉ॰ सविता डागर, चरखी दादरी
छोटूराम किसान कालेज, जींद
प्राचार्य, ए॰पी॰जे॰ सरस्वती पी॰जी॰ कालेज,
चरखी दादरी
विनोदकुमार कौशिक, चरखी दादरी
डी॰सी॰ मॉडल सीनियर सेकेंडरी स्कूल
फरीदाबाद
श्रीमती विधु गुप्ता, गुड़गाँव

आपसे कुछ बातें...

कहा जाता है कि हिंदी साहित्य की किताबें बिकती नहीं हैं, बल्कि सरकारी ख़रीद के भरोसे प्रकाशित होती हैं। कहा तो यह भी जाता है कि एक समय किसी पुस्तक का पहला संस्करण तीन हज़ार प्रतियों का हुआ करता था, जो आज तीन सौ तक सिमटकर रह गया है और यह सब उस भाषा के बारे में बताया जा रहा है, जिसे पढ़ने वालों की संख्या करोड़ों में है। आख़िर क्या वजह हो सकती है इस निराशाजनक स्थिति की? कम-से-कम यह तो बिलकुल नहीं कि हिंदी-क़िताबें बहुत महँगी होती हैं। लगभग सभी प्रकाशक पेपरबैक संस्करण प्रकाशित करते हैं और उनकी क़ीमतें भी कम होती हैं। तो फिर कुछ तो ऐसा है, जो पाठक और पुस्तक के बीच एक दूरी बनाए हुए है? शायद पाठक तक पुस्तक की पहुँच का रास्ता यहाँ बाधक हो सकता है। अच्छी और किफ़ायती क़िताबें पाठक तक आसानी से नहीं पहुँच पा रही हैं।

पुस्तक और पाठक के बीच की दूरी को कम करने के उद्देश्य से हिंदी साहित्य निकेतन एक अभिनव योजना प्रस्तुत करने जा रहा है, जिसमें क़िताबें तो सस्ती होंगी ही, साथ ही इसमें पाठकों की रुचि का ध्यान रखते हुए अच्छी और उत्कृष्ट रचनाओं को शामिल किया जाएगा। यहाँ हम यह भी स्पष्ट करना चाहेंगे कि यह हमारा एक प्रयास-भर है हिंदी साहित्य पर लग रहे पठनीयता की कमी के आरोपों को झुठलाने का, हमारा ऐसा कोई दावा हरगिज़ नहीं है कि हम पुस्तकों के आसमान छूते मूल्यों को ज़मीन पर लाकर खड़ा करने जा रहे हैं और यह भी नहीं कि इस योजना में हम जो प्रस्तुत करने जा रहे हैं, वही हिंदी का सर्वश्रेष्ठ सृजन है। हम यह वायदा अवश्य कर सकते हैं कि देश के योग्य सलाहकार मंडल के कुशल मार्गदर्शन में हम पाठक की क्रयक्षमता का पूर्ण सम्मान करते हुए पठनीय साहित्यिक सामग्री का समावेश यहाँ करने का पूर्ण प्रयास करेंगे। हमारा यह भी प्रयास रहेगा कि पुस्तक का मूल्य किसी भी स्थिति में पचास पैसे प्रति पृष्ठ से अधिक नहीं हो और पाठक को पुस्तक पढ़ने के बाद प्रत्येक पृष्ठ के लिए चुकाई गई कीमत की वापसी जैसा अहसास हो।

इस योजना के सलाहकार मंडल में सम्मिलित हैं–प्रोफेसर अशोक चक्रधर, प्रोफेसर मोहन श्रोत्रिय, डॉ॰ नंद भारद्वाज, नवलकिशोर शर्मा

जनसुलभ साहित्य योजना

हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर (उत्तर प्रदेश) द्वारा कम कीमत में अच्छी पुस्तकों की इस अभिनव योजना में एक साथ छह-छह पुस्तकों के दो सैट शामिल हैं, जिनमें हमारा प्रयास है हिंदी साहित्य की लगभग समस्त विधाओं पर सामग्री प्रस्तुत करने का। यहाँ आपको हिंदी कहानी, लघुकथा, गीत, ग़ज़ल, व्यंग्य, लेख, हास्य-कविता, मनोरंजन सामग्री आदि सभी कुछ उपलब्ध कराने का हमारा इरादा है। छह पुस्तकों के एक सैट का मूल्य ढाई सौ रुपये रखा गया है यानी क़रीब सौ पृष्ठ की एक पुस्तक का मूल्य मात्र पचास रुपये। इस तरह पहले चरण में शामिल बारह पुस्तकें सिर्फ़ पाँच सौ रुपये में उपलब्ध कराई जाएँगी। अपने इष्ट मित्रों, परिचितों और परिजनों को विभिन्न मांगलिक अवसरों पर उपहार देने के लिए यह एक अच्छा विकल्प हो सकता है। पहले आप पढ़ें और फिर अपनों को पढ़ाएँ। आपके सहयोग से यदि हम हिंदी साहित्य की सेवा के इस पुनीत कार्य में कामयाब रहते हैं, तो हम यक़ीन दिलाते हैं कि हम इस तरह के कम-से-कम दस सेट यानी कुल एक सौ बीस क़िताबें इस योजना में शामिल करने का विचार रखते हैं।

यूँ प्राप्त करें पुस्तकों का यह सैट

चूँकि यह कार्य अधिक लाभप्रद नहीं है, इसलिए हम पुस्तक और पाठक के बीच की कड़ी यानी बाज़ार को इस योजना से अलग रखकर सीधे प्रकाशक और पाठक के नए रिश्ते विकसित करने की पहल करना चाह रहे हैं, जिससे कि बीच का व्यय क़िताब पर भार न बने और योजना अधिक गति पकड़ सके। इसीलिए हमने सीधे आप तक इस योजना का परिचय कराना उचित समझा है। आपको अपना आदेश सीधे हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर को भेजना है और साथ में इसके पक्ष में देय ड्राफ़्ट, चैक भी अग्रिम भेजना है। मनीऑर्डर आदि हम स्वीकार नहीं कर पाएँगे। वी॰पी॰पी॰ के माध्यम से भी हम आपकी सेवा कर पाएँगे। आपका आदेश और ड्राफ़्ट, चैक प्राप्त होते ही संस्था के ख़र्च पर रजिस्टर्ड डाक से आपको पुस्तक के सैट भिजवा दिए जाएँगे।

अनुक्रम

दुनिया का सबसे अनमोल रतन / **प्रेमचंद** 7
हस्ताक्षर/ **सुधा भार्गव** 12
भ्रष्टाचार एक भ्रम है/
दिखाऊ नैतिकता के दु:ख/
दूध का धुला लोकतंत्र/
गोपाल चतुर्वेदी 13
आदमी और कुत्ते की नाक /
डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल 16
जिहाद जारी है /
महेशचंद्र द्विवेदी 20
वो प्यारे दिन/
मान भी जा छुटकी/
गीतिका गोयल 25
कमरा नंबर 103 / **सुधा ओम ढींगरा** 28
कुत्तेवाले पापा / **डॉ॰ मीना अग्रवाल** 33
धर्म-कर्म / **सूर्यकांत नागर** 36
इस्मत आपा और तीन जवान लड़के /
नवलकिशोर शर्मा 37
सत्ता के गुंडे/
राजनीति में बागी, दागी/
कैरियर को लेकर पिता-पुत्र की बातचीत/
हरीशकुमार सिंह 41
अफ़लातून की अकादमी / **डॉ॰ शिव शर्मा** 44
आदमी के बच्चे / **प्रेम जनमेजय** 48
नवजन्मा / **रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'** 49
दूसरा चेहरा / **सुकेश साहनी** 49
गोभोजन-कथा / **बलराम अग्रवाल** 50
जाति / **अंकुश्री** 50
इंसानी रंग / **सुभाष नीरव** 51
सहानुभूति / **सतीशराज पुष्करणा** 52
माँ का कमरा / **श्यामसुंदर अग्रवाल** 52
खूबसूरत हाथ / **डॉ॰ हरदीप कौर संधु** 53
बौना / **हीरालाल नागर** 25

हिंदी साहित्य निकेतन ने जनसुलभ साहित्य माला के अंतर्गत जिन पुस्तकों को प्रकाशित किया है, उनका विवरण इस प्रकार है। इनमें से प्रत्येक पुस्तक का मूल्य केवल पचास रुपए रखा गया है–

कहानी

कमरा नंबर 103 : सुधा ओम ढींगरा
इमराना हाज़िर हो : महेशचंद्र द्विवेदी
कहानियाँ अमेरिका से : सं॰ इला प्रसाद
कुत्तेवाले पापा : मीना अग्रवाल
प्रेमचंद की कालजयी कहानियाँ : सं॰ डॉ॰ कमलकिशोर गोयनका
लघुकथाएँ मानव-जीवन की : सं॰ सुकेश साहनी, रामेश्वर कांबोज 'हिमांशु'

व्यंग्य

दूध का धुला लोकतंत्र : गोपाल चतुर्वेदी
आदमी और कुत्ते की नाक : डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल
सच का सामना : हरीशकुमार सिंह

व्यंग्य-एकांकी

अफलातून की अकादमी : डॉ॰ शिव शर्मा

सिनेमा

सिनेमा, साहित्य और संस्कृति : नवलकिशोर शर्मा

कविता

मान भी जा छुटकी : गीतिका गोयल

दुनिया का सबसे अनमोल रतन

प्रेमचंद

दिलफ़िगार एक कँटीले पेड़ के नीचे दामन चाक किए बैठा हुआ ख़ून के आँसू बहा रहा था। वह सौंदर्य की देवी यानी मलका दिलफ़रेब का सच्चा और जान देने वाला प्रेमी था। उन प्रेमियों में नहीं जो इत्र-फुलेल में बसकर और शानदार कपड़ों से सजकर आशिक़ के वेश में माशूक़ियत का दम भरते हैं, बल्कि उन सीधे-सादे, भोले-भाले फ़िदाइयों में जो जंगल और पहाड़ों से सट टकराते हैं और फ़रियाद मचाते फिरते हैं। दिलफ़रेब ने उससे कहा था कि अगर तू मेरा सच्चा प्रेमी है, तो जा और दुनिया की सबसे अनमोल चीज़ लेकर मेरे दरबार में आ। तब मैं तुझे अपनी ग़ुलामी में क़बूल करूँगी। अगर तुझे वह चीज़ न मिले तो ख़बरदार इधर रुख़ मत करना, वर्ना सूली पर खिंचवा दूँगी। दिलफ़िगार को अपनी भावनाओं के प्रदर्शन का, शिकवे-शिकायत का, प्रेमिका के सौंदर्य-दर्शन का तनिक भी अवसर न दिया गया। दिलफ़रेब ने ज्यों ही यह फ़ैसला सुनाया उसके चोबदारों ने ग़रीब दिलफ़िगार को धक्के देकर बाहर निकाल दिया और आज तीन दिन से यह आफ़त का मारा आदमी उसी कँटीले पेड़ के नीचे उसी भयानक मैदान में बैठा हुआ सोच रहा है कि क्या करूँ। दुनिया की सबसे अनमोल चीज़ मुझको मिलेगी? नामुमकिन! और वह है क्या? कारूँ का ख़ज़ाना? आबेहयात? खुसरो का ताज? जामे- जम? तख़्ते ताऊस? परबेज़ की दौलत? नहीं, यह चीज़ें हरगिज़ नहीं। दुनिया में ज़रूर इनसे भी महँगी, इनसे भी अनमोल चीज़ें मौजूद हैं, मगर वह क्या हैं? कैसे मिलेंगी? या ख़ुदा, मेरी मुश्किल क्योंकर आसान होगी?

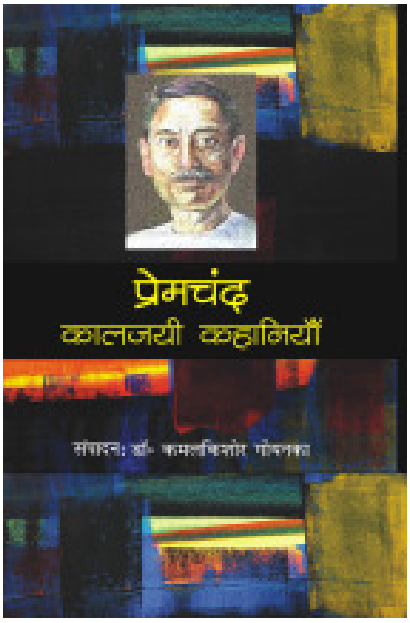

दिलफ़िगार इन्हीं ख़्यालों में चक्कर खा रहा था और अक्ल कुछ काम नहीं करती थी। मुनीर शामी को हातिम-सा मददगार मिल गया। ऐ काश कोई मेरा भी मददगार हो जाता, ऐ काश मुझे भी उस चीज़ का, जो दुनिया की सबसे बेशक़ीमती चीज़ है, नाम बतला दिया जाता! बला से वह चीज़ हाथ न आती, मगर मुझे इतना मालूम हो जाता कि वह किस क़िस्म की चीज़ है। मैं घड़े बराबर मोती की खोज में जा सकता हूँ। मैं समुंदर का गीत, पत्थर का दिल, मौत की आवाज़ और इनसे भी ज़्यादा बेनिशान चीज़ों की तलाश में कमर कस सकता हूँ। मगर दुनिया की सबसे अनमोल चीज़! यह मेरी कल्पना की उड़ान से बहुत ऊपर है।

आसमान पर तारे निकल आए थे। दिलफ़िगार यकायक ख़ुदा का नामक लेकर उठा और एक तरफ़ को चल खड़ा हुआ। भूखा-प्यासा, नंगे बदन, थकन से चूर, वह बरसों वीरानों और आबादियों की खाक छानता फिरा, तलवे काँटो से छलनी हो गए, शरीर में हड्डियाँ-ही-हड्डियाँ दिखाई देने लगीं, मगर वह चीज़, जो दुनिया की सबसे बेशक़ीमती चीज़ थी, न मिली और न उसका कुछ निशान मिला।

एक रोज वह भूलता-भटकता एक मैदान में जा निकला, जहाँ हज़ारों आदमी गोल बाँधे खड़े थे। बीच में कई अमामे और चोग़ेवाले दड़ियल क़ाज़ी अफ़सरी शान से बैठे हुए आपस में कुछ सलाह- मशबिरा कर रहे थे और इस जमात से ज़रा दूर पर एक सूली खड़ी थी। दिलफ़िगार कुछ तो कमज़ोरी की वजह से और कुछ यहाँ की कैफ़ियत देखने के इरादे से ठिठक गया। क्या देखता है कि कई लोग नंगी तलवारें लिए, एक क़ैदी को, जिसके हाथ-पैर में ज़ंजीरें थीं, पकड़े चले आ रहे हैं। सूली के पास पहुँचकर सब सिपाही रुक गए और क़ैदी की हथकड़ियाँ-बेड़ियाँ सब उतार ली गईं। इस अभागे आदमी का दामन सैकड़ों बेगुनाहों के ख़ून के छीटों से रंगीन था और उसका दिल नेकी के ख़्याल और रहम की आवाज़ से ज़रा भी परिचित न था। उसे काला चोर कहते थे। सिपाहियों ने उसे सूली के तख़्ते पर खड़ा कर दिया, मौत की फाँसी उसकी गर्दन में

डाल दी और जल्लादों ने तख़्ता खींचने का इरादा किया कि वह अभागा मुजरिम चीख़कर बोला–ख़ुदा के वास्ते मुझे एक पल के लिए फाँसी से उतार दो, ताकि अपने दिल की आख़री आरज़ू निकाल लूँ। यह सुनते ही चारों तरफ़ सन्नाटा छा गया। लोग अचंभे में आकर ताकने लगे। क़ाज़ियों ने एक मरनेवाले आदमी की अंतिम याचना को रद्द करना उचित न समझा और बदनसीब पापी काला चोर ज़रा देर के लिए फाँसी से उतार लिया गया।

इसी भीड़ में एक ख़ूबसूरत भोला-भाला लड़का एक छड़ी पर सवार होकर अपने पैरों पर उछल-उछल फ़र्जी घोड़ा दौड़ा रहा था और अपनी सादगी की दुनिया में ऐसा मगन था कि जैसे वह इस वक़्त सचमुच अरबी घोड़े का शहसवार है। उसका चेहरा उस सच्ची ख़ुशी से कमल की तरह खिला हुआ था, जो चंद दिनों के लिए बचपन में हासिल होती है और जिसकी याद हमको मरते दम तक नहीं भूलती। उसका दिल अभी तक पाप की गर्द और धूल से अछूता था और मासूमियत उसे अपनी गोद में खिला रही थी।

बदनसीब काला चोर फाँसी से उतरा। हज़ारों आँखें उस पर गड़ी हुई थीं। वह उस लड़के के पास आया और उसे गोद में उठाकर प्यार करने लगा। उसे इस वक़्त वह ज़माना याद आया जब वह ख़ुद ऐसा ही भोला-भाला, ऐसा ही ख़ुश-ब-ख़ुर्रम और दुनिया की गंदगियों से ऐसा ही पाक-साफ़ था। माँ गोदियों में खिलाती थी, बाप बलाएँ लेता था और सारा क़ुनबा जान न्योछावर करता था। आह, काले चोर के दिल पर इस वक़्त बीते हुए दिनों की याद का इतना असर हुआ कि उसकी आँखों से, जिन्होंने दम तोड़ती हुई लाशों को तड़पते देखा और न झपकीं, आँसू का एक क़तरा टपक पड़ा। दिलफ़िगार ने लपककर उस अनमोल मोती को हाथ में ले लिया और उसके दिल ने कहा–बेशक यह दुनिया की सबसे अनमोल चीज़ है, जिस पर तख़्ते ताऊस और जामे-जम और आबेहयात और जरे-परवज़ सब न्यौछावर हैं।

इस ख़्याल से ख़ुश होता, कामयाबी की उम्मीद में सरमस्त, दिलफ़िगार अपनी माशूक़ा दिलफ़रेब के शहर मीनोसवाद को चला। मगर ज्यों-ज्यों मंज़िलें तय होती जाती थीं, उसका दिल बैठा जाता था कि कहीं उस चीज़ की, जिसे मैं दुनिया की सबसे बेशक़ीमत चीज़ समझता हूँ, दिलफ़रेब की आँखों में क़द्र न हुई तो मैं फाँसी पर चढ़ा दिया जाऊँगा और इस दुनिया से नामुराद जाऊँगा। लेकिन जो हो सो हो, अब तो क़िस्मत-आजमाई है। आख़िरकार पहाड़ और दरिया तय करते शहर मीनोसवाद में आ पहुँचा और दिलफ़रेब की ड्योढ़ी पर जाकर विनती की कि थकान से टूटा हुआ दिलफ़िगार ख़ुदा के फ़ज़ल से हुक्म की तामील करके आया है और आपके क़दम चूमना चाहता है। दिलफ़रेब ने फ़ौरन अपने सामने बुला भेजा और एक सुनहरे परदे की ओट से फ़रमाइश की कि वह अनमोल चीज़ पेश करो। दिलफ़िगार ने आशा और भय की एक विचित्र मनःस्थिति में वह बूँद पेश की और उसकी सारी कैफ़ियत बहुत पुरअसर लफ़्ज़ों में बयान की। दिलफ़रेब ने पूरी कहानी बहुत गौर से सुनी और वह भेंट हाथ में लेकर ज़रा देर तक गौर करने के बाद बोली–'दिलफ़िगार, बेशक तूने दुनिया की एक बेशक़ीमत चीज़ ढूँढ निकाली, तेरी हिम्मत और तेरी सूझ-बूझ की दाद देती हूँ! मगर यह दुनिया की सबसे बेशक़ीमत चीज़ नहीं, इसलिए तू यहाँ से जा और फिर कोशिश कर, शायद अब की तेरे हाथ वह मोती लगे और तेरी क़िस्मत में मेरी ग़ुलामी लिखी हो। जैसा कि मैंने पहले ही बतला दिया था, मैं तुझे फाँसी पर चढ़वा सकती हूँ, मगर मैं तेरी जाँबख़्शी करती हूँ, इसलिए कि तुझमें वह गुण मौजूद हैं, जो मैं अपने प्रेमी में देखना चाहती हूँ और मुझे यक़ीन है कि तू ज़रूर कभी-न-कभी कामयाब होगा।'

> कुछ देर तक तो दिलफ़िगार अपनी निष्ठुर प्रेमिका की इस कठोरता पर आँसू बहाता रहा और फिर सोचने लगा कि अब कहाँ जाऊँ! मुद्दतों रास्ते नापने और जंगलों में भटकने के बाद आँसू की यह बूँद मिली थी, अब ऐसी कौनसी चीज़ है, जिसकी क़ीमत इस आबदार मोती से ज़्यादा हो।

नाकाम और नामुराद दिलफ़िगार इस माशूक़ाना इनायत से ज़रा दिलेर होकर बोला–'ऐ दिल की रानी, बड़ी मुद्दत के बाद तेरी ड्योढ़ी पर सज़दा करना नसीब होता है। फिर ख़ुदा जाने ऐसे दिन कब आएँगे, क्या तू अपने जान देनेवाले आशिक़ के बुरे हाल पर तरस न खाएगी और क्या अपने रूप की एक झलक दिखाकर इस जलते हुए दिलफ़िगार को आनेवाली सख़्तियों के झेलने की ताक़त न देगी? तेरी एक मस्त निगाह के नशे से चूर होकर मैं वह कर सकता हूँ जो आज तक किसी से न बन पड़ा हो।'

दिलफ़रेब आशिक़ की यह चाव-भरी बातें सुनकर ग़ुस्सा हो गई और हुक्म दिया कि इस दीवाने को खड़े-खड़े दरबार से निकाल दो। चोबदार ने फ़ौरन ग़रीब दिलफ़िगार को धक्का देकर यार के कूचे से बाहर निकाल दिया।

कुछ देर तक तो दिलफ़िगार अपनी निष्ठुर प्रेमिका की इस कठोरता पर आँसू बहाता रहा और फिर सोचने लगा कि अब कहाँ जाऊँ! मुद्दतों रास्ते नापने और जंगलों में भटकने के बाद आँसू की यह बूँद मिली थी, अब ऐसी कौनसी चीज़ है, जिसकी क़ीमत इस आबदार मोती से ज़्यादा हो। हज़रते खिज़्र! तुमने सिकंदर को आबेहयात के कुएँ का रास्ता दिखाया था, क्या मेरी बाँह न पकड़ोगे? सिकंदर सारी दुनिया का मालिक था। मैं तो बेघरबार मुसाफ़िर हूँ। तुमने कितनी ही डूबती किश्तियाँ किनारे लगाई हैं, मुझ ग़रीब का बेड़ा भी पार करो। ऐ आली मुक़ाम जिबरील! कुछ तुम्हीं इस नीमजान दुःखी आशिक़ पर तरस खाओ। तुम ख़ुदा के एक ख़ास दरबारी हो, क्या मेरी मुश्किल आसान न करोगे? गरज़ यह कि दिलफ़िगार ने बहुत फ़रियाद मचाई, मगर उसका हाथ पकड़ने के लिए कोई सामने न आया। आख़िर निराश होकर वह पागलों की तरह दुबारा एक तरफ़ को चल पड़ा।

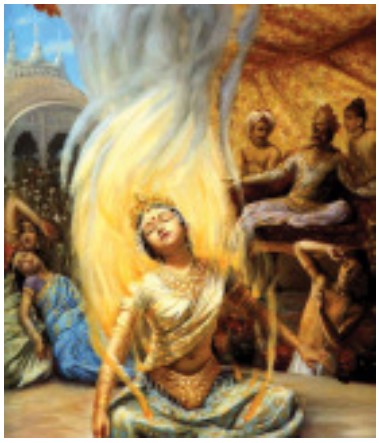

दिलफ़िगार ने पूरब से पश्चिम तक और उत्तर से दक्खिन तक कितने ही जंगलों और वीरानों की ख़ाक छानी, कभी बर्फ़िस्तानी चोटियों पर सोया, कभी डरावनी घाटियों में भटकता फिरा, मगर जिस चीज़ की धुन थी, वह न मिली। यहाँ तक कि उसका शरीर हड्डियों का एक ढाँचा रह गया।

एक रोज़ वह शाम के वक़्त किसी नदी के किनारे ख़स्ताहाल पड़ा हुआ था। बेख़ुदी के नशे से चौंका तो क्या देखता है कि चंदन की एक चिता बनी हुई है और उस पर युवती सुहाग के जोड़े पहने सोलह सिंगार किए बैठी है, उसकी जाँघ पर उसके प्यारे पति का सर है। हज़ारों आदमी गोल बाँधे खड़े हैं और फूलों की बरखा कर रहे हैं। यकायक चिता में से ख़ुद-ब-ख़ुद लपक उठी। सती का चेहरा उस वक़्त एक पवित्र भाव से आलोकित हो रहा था, चिता की पवित्र लपटें उसके गले से लिपट गईं और दम-के-दम में वह फूल-सा शरीर राख का ढेर हो गया। प्रेमिका ने अपने को प्रेम पर न्योछावर कर दिया और दो प्रेमियों के सच्चे, पवित्र, अमर प्रेम की अंतिम लीला आँख से ओझल हो गई। जब सब लोग अपने घरों को लौटे, तो दिलफ़िगार चुपके से उठा और अपने चाक-दामन कुरते में यह राख का ढेर समेट लिया और इस मुट्ठी-भर राख को दुनिया की सबसे अनमोल चीज़ समझता हुआ, सफलता के नशे में चूर, यार के कूचे की तरफ़ चला। अबकी ज्यों-ज्यों वह अपनी मंज़िल के क़रीब आता था, उसकी हिम्मत बढ़ती जाती थी। कोई उसके दिल में बैठा हुआ कह रहा था—अबकी तेरी जीत है और इस ख़्याल ने उसके दिल को जो-जो सपने दिखाए उनकी चर्चा व्यर्थ है। आख़िरकार वह शहर मोनोसवाद में दाख़िल हुआ और दिल फ़रेब की ऊँची ड्योढ़ी पर जाकर ख़बर दी कि दिलफ़िगार सुर्ख़-रू होकर लौटा है, और हुज़ूर के सामने आना चाहता है। दिलफ़रेब ने जाँबाज आशिक़ को फ़ौरन दरबार में बुलाया और उस चीज़ के लिए, जो दुनिया की सबसे बेशक़ीमत चीज़ थी, हाथ फैला दिया। दिलफ़िगार ने हिम्मत करके उसकी चाँदी जैसी कलाई को चूम लिया और मुट्ठी-भर राख को उसकी हथेली में रखकर सारी कैफ़ियत दिल को पिघला देने वाले लफ़्ज़ों में कह सुनाई और अपनी सुंदर प्रेमिका के होठों से अपनी क़िस्मत का मुबारक फ़ैसला सुनने के लिए इंतज़ार करने लगा। दिलफ़रेब ने उस मुट्ठी-भर राख को आँखों से लगा लिया और कुछ देर तक विचारों के सागर में डूबे रहने के बाद बोली—'ऐ जान निछावर करनेवाले आशिक़ दिलफ़िगार! बेशक यह राख जो तू लाया है, जिसमें लोहे को सोना कर देने की सिफ़त है, दुनिया की बहुत बेशक़ीमती चीज़ है और मैं सच्चे दिल से तेरी अहसानमंद हूँ कि तूने ऐसी अनमोल भेंट दी। मगर दुनिया में इससे भी ज़्यादा अनमोल कोई चीज़ है, जा उसे तलाश कर और तब मेरे पास आ। मैं तहेदिल से दुआ करती हूँ कि ख़ुदा तुझे कामयाब करे।' यह सुनकर वह सुनहरे परदे से बाहर आई और माशूक़ाना अदा से अपने रूप का जलवा दिखाकर फिर नज़रों से ओझल हो गई। एक बिजली-सी कौंधी और फिर बादलों के परदे में छिप गई। अभी दिलफ़िगार के होश-हवास ठिकाने पर न आने पाए थे कि चोबदार ने मुलायमियत से उसका हाथ पकड़कर यार के कूचे से उसको निकाल दिया और फिर तीसरी बार वह प्रेम का पुजारी निराशा के अथाह सागर में ग़ोता खाने लगा।

दिलफ़िगार का हियाब छूट गया। उसे यक़ीन हो गया कि मैं दुनिया में इसी तरह नाशाद और नामुराद मर जाने के लिए पैदा किया गया था और अब इसके सिवा और कोई चारा नहीं कि किसी पहाड़ पर चढ़कर नीचे कूद पड़ूँ, ताकि माशूक़ के जुल्मों की फ़रियाद करने के लिए एक हड्डी भी बाक़ी न रहे। वह दीवाने की तरह उठा गिरता-पड़ता एक गगनचुंबी पहाड़ की चोटी पर जा पहुँचा। किसी और समय वह ऐसे ऊँचे पहाड़ पर चढ़ने का साहस न कर सकता था, मगर इस वक़्त जान देने के जोश में उसे वह पहाड़ एक मामूली टेकरी से ज़्यादा ऊँचा न नज़र आया। क़रीब था कि वह नीचे कूद पड़े कि हरे-हरे कपड़े पहने हुए और हीर अमामा बाँधे एक बुज़ुर्ग एक हाथ में तसबीह और दूसरे हाथ में लाठी लिए बरामद हुए और हिम्मत बढ़ानेवाले स्वर में बोले–'दिलफ़िगार, नादान दिलफ़िगार, यह क्या बुज़दिलों जैसी हरकत है! तू मुहब्बत का दाबा करता है और तुझे इतनी भी ख़बर नहीं कि मज़बूत इरादा मुहब्बत के रास्ते की पहली मंज़िल है? मर्द बन और यों हिम्मत न हार। पूरब की तरफ़ एक देश है, जिसका नाम हिंदोस्तान है, वहाँ जा और तेरी आरज़ू पूरी होगी।'

यह कहकर हज़रते खिज्र ग़ायब हो गए। दिलफ़िगार ने शुक्रिए की नमाज़ अदा की और ताज़ा हौसले, ताज़ा जोश और अलौकिक सहायता का सहारा पाकर ख़ुश-ख़ुश पहाड़ से उतरा और हिंदुस्तान की तरफ़ चल पड़ा।

मुद्दतों तक काँटे से भरे हुए जंगलों, आग बरसाने वाले रेगिस्तानों, कठिन घाटियों और अलंघ्य पर्वतों को तय करने के बाद दिलफ़िगार हिंद की पाक सरज़मीन में दाख़िल हुआ और एक ठंडे पानी के सोते में सफ़र की तकलीफ़ें धोकर थकान के मारे नदी के किनारे लेट गया। शाम होते-होते वह एक चटियल मैदान में पहुँचा, जहाँ बेशुमार अधमरी और बेजा लाशें बिना कफ़न के पड़ी हुई थीं। चील-कौए और बहशी दरिंदे मरे पड़े थे और सारा मैदान ख़ून से लाल हो रहा था। यह डरावना दृश्य देखते ही दिलफ़िगार का जी दहल गया। या ख़ुदा, किस मुसीबत में जान फँसी, मरने वालों का कराहना, सिसकना और एड़ियाँ रगड़कर जान देना, दरिंदों का हड्डियों को नोचना और गोश्त के लोथड़ों को लेकर भागना, ऐसा हौलनाक सीन दिलफ़िगार ने कभी न देखा था। यकायक उसे ख़्याल आया, यह लड़ाई का मैदान है और ये लाशें सूरमा सिपाहियों की हैं। इतने में क़रीब से कराहने की आवाज़ आई। दिलफ़िगार उस तरफ़ फिरा तो देखा कि एक

डॉ॰ कमलकिशोर गोयनका

जन्म : 11 अक्टूबर 1938, बुलंदशहर (उ॰प्र॰)
शिक्षा : एम॰ए॰ (हिंदी), पी-एच॰डी॰, डी॰लिट्॰ (हिंदी)
कृतियाँ : आलोचना–प्रेमचंद के उपन्यासों का शिल्प-विधान, प्रेमचंद, प्रेमचंद और शतरंज के खिलाड़ी, प्रेमचंद : अध्ययन की नई दिशाएँ, रंगभूमि : नए आयाम, प्रेमचंद : चित्रात्मक जीवनी, लघुकथा का व्याकरण, प्रेमचंद और रंगभूमि उपन्यास, गांधी : पत्रकारिता के प्रतिमान; संस्मरण–प्रेमचंद : कुछ संस्मरण, हज़ारीप्रसाद द्विवेदी : कुछ संस्मरण, यशपाल : कुछ संस्मरण ; साक्षात्कार–अभिमन्यु अनत : एक बातचीत, जिज्ञासाएँ मेरी : समाधान बच्चन के, दिनेशनंदिनी डालमिया से बातचीत; संपादन–प्रभाकर माचवे : प्रतिनिधि रचनाएँ, प्रेमचंद विश्वकोश (खंड 1-2), मन्मथनाथ गुप्त : प्रतिनिधि कहानियाँ, जगदीश चतुर्वेदी : विवादास्पद रचनाकार, रवींद्रनाथ त्यागी : प्रतिनिधि रचनाएँ, विष्णु प्रभाकर : प्रतिनिधि रचनाएँ, प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य (खंड 1-2), प्रेमचंद की हिंदी-उर्दू कहानियाँ, रामकुमार वर्मा नाटक रचनावली, रामकुमार भ्रमर रचनावली, अभिमन्यु अनत : समग्र कविताएँ, मॉरिशस की हिंदी कहानियाँ, मंजुल भगत : समग्र कथासाहित्य, प्रेमचंद की अप्राप्य कहानियाँ
पुरस्कार-सम्मान : भारतीय भाषा परिषद्, कलकत्ता; हिंदी अकादमी, दिल्ली; केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा; उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ; महात्मा गांधी इंस्टिट्यूट, मॉरिशस तथा देश-विदेश में अनेक संस्थाओं द्वारा 'प्रेमचंद विशेषज्ञ' के रूप में सम्मानित।
पता–ए-98, अशोक विहार, फ़ेज-1, दिल्ली 110052
दूरभाष : 011- 27219251, 09811052469

लंबा-तगड़ा आदमी, जिसका मर्दाना चेहरा जान निकलने की कमज़ोरी से पीला हो गया है, ज़मीन पर सर झुकाए पड़ा हुआ है। सीने से ख़ून का फव्वारा जारी है, मगर आबदार तलवार की मूठ पंजे से अलग नहीं हुई। दिलफ़िगार ने एक चीथड़ा लेकर घाव के मुँह पर रख दिया, ताकि ख़ून रुक जाए और बोला–'ऐ जवाँमर्द, तू कौन है?' जवाँमर्द ने यह सुनकर आँखें खोलीं और वीरों की तरह बोला–'क्या तू नहीं जानता मैं कौन हूँ, क्या तूने आज इस तलवार की काट नहीं देखी? मैं अपनी माँ का बेटा और भारत का सपूत हूँ।' यह कहते-कहते उसकी त्योरियों पर बल पड़ गए। पीला चेहरा ग़ुस्से से लाल हो गया और आबदार शमशीर फिर अपना जौहर दिखाने के लिए चमक उठी। दिलफ़िगार समझ गया कि यह इस वक़्त मुझे दुश्मन समझ रहा है, वह नरमी से बोला–'ऐ जवाँमर्द, मैं तेरा दुश्मन नहीं हूँ। अपने वतन से निकला हुआ एक ग़रीब मुसाफ़िर हूँ। इधर भूलता-भटकता आ निकला। बराय मेहरबानी मुझसे यहाँ की कुल कैफ़ियत बयान कर।'

यह सुनते ही घायल सिपाही बहुत मीठे स्वर में बोला–'अगर तू मुसाफ़िर है तो आ और मेरे ख़ून से तर पहलू में बैठ जा, क्योंकि यही दो अंगुल ज़मीन है, जो मेरे पास बाक़ी रह गई है और सिवाय मौत के कोई नहीं छीन सकता। अफ़सोस है कि तू यहाँ ऐसे वक़्त में आया, जब हम तेरा आतिथ्य-सत्कार करने के योग्य नहीं। हमारे बाप-दादा का देश आज हमारे हाथ से निकल गया और इस वक़्त हम बेवतन हैं। मगर (पहलू बदलकर) हमने हमलावर दुश्मन को बता दिया कि राजपूत अपने देश के लिए कैसी बहादुरी से जान देता है। यह आस-पास जो लाशें तू देख रहा है, यह उन लोगों की हैं, जो इस तलवार के घाट उतरे हैं। (मुस्कुराकर) और गो कि मैं बेवतन हूँ, मगर ग़नीमत है कि दुश्मन की ज़मीन पर मर रहा हूँ। (सीने से घाव का चीथड़ा निकालकर) क्या तूने यह मरहम रख दिया? ख़ून निकलने दे, इसे रोकने से क्या फ़ायदा? क्या मैं अपने ही देश में ग़ुलामी करने के लिए ज़िंदा रहूँ? नहीं, ऐसी ज़िंदगी से मर जाना अच्छा। इससे अच्छी मौत मुमकिन नहीं।'

जवाँमर्द की आवाज़ मद्धिम हो गई, अंग ढीले पड़ गए, ख़ून इतना ज़्यादा बहा कि ख़ुद-ब-ख़ुद बंद हो गया, रह-रहकर एकाध बूँद टपक पड़ता था। आख़िरकार सारा शरीर बेदम हो गया, दिल की हरकत बंद हो गई और आँखें मुँद गईं। दिलफ़िगार ने समझा अब काम तमाम हो गया कि मरनेवाले ने धीमे से कहा–'भारतमाता की जय।' और उसके सीने से ख़ून का आख़िरी क़तरा निकल पड़ा। एक सच्चे देशप्रेमी और देशभक्त ने देशभक्ति का हक़ अदा कर दिया। दिलफ़िगार पर इस दृश्य का बहुत गहरा असर पड़ा और उसके दिल ने कहा, बेशक दुनिया में ख़ून के इस क़तरे से ज़्यादा अनमोल चीज़ कोई हो नहीं सकती। उसने फ़ौरन उस ख़ून की बूँद को, जिसके आगे यमन का लाल भी हेच है, हाथ में ले लिया और इस दिलेर राजपूत की बहादुरी पर हैरत करता हुआ अपने वतन की तरफ़ रवाना हुआ और सख़्तियाँ झेलता आख़िरकार बहुत दिनों के बाद रूप की रानी मलका दिलफ़रेब की ड्योढ़ी पर जा पहुँचा और पैग़ाम दिया कि दिलफ़िगार सुर्ख़रू और कामयाब होकर लौटा है और दरबार में हाज़िर होना चाहता है। दिलफ़रेब ने उसे फ़ौरन हाज़िर होने का हुक्म दिया। ख़ुद हस्बे-मामूल सुनहरे पर्दे की ओट में बैठी और बोली–'दिलफ़िगार अबकी तू बहुत दिनों बाद वापस आया है। ला, दुनिया की सबसे बेशक़ीमत चीज़ कहाँ है?'

दिलफ़िगार ने मेहँदी-रची हथेलियों को चूमते हुए ख़ून का वह क़तरा उस पर रख दिया और उसकी पूरी कैफ़ियत पुरजोश लहजे में कह सुनाई। वह ख़ामोश भी न होने पाया था, कि यकायक वह सुनहरा परदा हट गया और दिलफ़िगार के सामने हुस्न का एक दरबार सजा हुआ नज़र आया, जिसकी एक-एक नाज़नीन जुलेखा से बढ़कर थी। दिलफ़िगार हुस्न का यह तिलिस्म देखकर अचंभे में पड़ गया और चित्रलिखित-सा खड़ा रहा कि दिलफ़रेब मसनद से उठी और कई क़दम आगे बढ़कर उससे लिपट गई। गानेवालियों ने ख़ुशी के गाने शुरू कर दिए, दरबारियों ने दिलफ़िगार को नज़रें भेंट कीं और चाँद-सूरज को बड़ी इज़्ज़त के साथ मसनद पर बैठा दिया। जब वह लुभावना गीत बंद हुआ तो दिलफ़रेब खड़ी हो गई और हाथ जोड़कर दिलफ़िगार से बोली–'ऐ जाँनिसार आशिक़ दिलफ़िगार! मेरी दुआएँ बर आईं और ख़ुदा ने मेरी सुन ली, और तुझे क़ामयाब व सुर्ख़रू किया। आज से तू मेरा मालिक है और मैं तेरी लौंडी!'

यह कहकर उसने एक रत्नजटित मंजूषा मँगाई और उसमें से एक तख़्ती निकाली, जिस पर सुनहरे अक्षरों में लिखा हुआ था–

'ख़ून का वह आख़िरी क़तरा जो वतन की हिफ़ाजत में गिरे, दुनिया की सबसे अनमोल चीज़ है।'

('सोजेवतन' उर्दू कहानी-संग्रह, जून, 1908)

('सोजेवतन' हिंदी कहानी-संग्रह, 1961)

('गुप्त-धन'-1, 1962 से प्रस्तुत)

हस्ताक्षर

सुधा भार्गव

संसद में यह अधिनियम पास हो गया था कि बाप-दादा की संपत्ति में बेटियों का भी हक़ है। यदि वे चाहें तो अपने क़ानूनी हक की लड़ाई लड़ सकती हैं। भाई बेचारों के बुरे दिन आ गए। यह हिस्सा-बाँटा नियम कहाँ से आन टपका! कुछ सहम गए, कुछ रहम खा गए, कुछ घपलेबाज़ी कर गए, कुछ चाल चल गए। माँ-बाप मुसीबत में फँस गए! बेटी को दें तो, बेटे से दुश्मनी, न दें तो उसके प्रति अन्याय! जिनके माँ-बाप ऊपर चले गए। उनके लड़कों ने संपत्ति की कमान सँभाली! निशाना ऐसा लगाया कि माल अपना ही अपना।

सोबती की शादी को दस वर्ष हो गए थे! वह हर समय भाइयों के नाम की माला जपती रहती—मेरे भाई महान हैं। उनके ख़िलाफ़ कुछ नहीं सुन सकती। लाखों में एक हैं वे। राखी के अवसर पर दोनों भाइयों की कलाई पर सोबती स्नेह के धागे बाँधती। वे भी भागे चले आते। उत्सव की परिणति महोत्सव में हो जाती।

इस साल भी तीनों भाई-बहन एकत्र हुए। छोटा भाई कुछ विचलित-सा था। ठीक राखी बँधने से पूर्व उसने एक प्रपत्र बहन के सामने बढ़ा दिया—'दीदी इस पर हस्ताक्षर कर दो।

हस्ताक्षर करने से पूर्व उसने उसे पढ़ना उचित समझा। लिखा था—'मैं इच्छा से पिता की संपत्ति में से अपना हक़ छोड़ रही हूँ।'

सोबती एक हाथ में प्रपत्र अवश्य पकड़े हुए थी, परंतु हृदय में उठती अनुराग की अनगिनत फुआरों में भीगी सोच रही थी—बचपन से ही मैं अपने हिस्से की मिठाई इन भाइयों के लिए रख देती थी और ये शैतान अपनी मिठाई भी खा जाते और मेरी भी! उनको खुश होता देख मेरा ख़ून तो दुगुना हो जाता था। आज ये बड़े हो गए तो क्या हुआ, रहेंगे तो मुझसे छोटे ही! यदि ये मेरा संपत्ति का अधिकार लेना चाहते हैं, तो इनकी मुस्कुराहटों की ख़ातिर प्रपत्र पर हस्ताक्षर कर दूँगी। मुझे तो इनको खुश देखने की आदत है...!

सोबती ने बारी-बारी से दोनों भाइयों की ओर देखा और मुस्कराकर प्रपत्र पर हस्ताक्षर कर दिए।

जनसुलभ साहित्य के चित्रकार मनोज कचंगल

मनोज कचंगल का जन्म शाढ़ौरा (मध्य प्रदेश) में 5 जुलाई 1979 को एक मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ। उन्होंने ललित कला संस्थान, इंदौर से वर्ष 2003 में चित्रकला में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की। उन्हें वर्ष 2001 में मध्य प्रदेश कला परिषद्, भोपाल द्वारा रज़ा-पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इनके चित्रों की अनेक एकल तथा सामूहिक प्रदर्शनियाँ देश की कई सुप्रसिद्ध कलादीर्घाओं में लग चुकी हैं। इनकी कलाकृतियाँ कुछ नीलामियों में नीलाम भी हुई हैं। देश के कई सुप्रसिद्ध कला-समालोचक इनकी कला पर अपने विचार रख चुके हैं। मनोज कचंगल के कलाकर्म पर श्रीमती रतनोत्तमा सेनगुप्ता के संपादन में भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली द्वारा 2008 में एक पुस्तक 'डोर्स ऑफ़ परसेप्शन आर्ट ऑफ़ मनोज कचंगल' का प्रकाशन भी किया गया है। इसी शीर्षक से कचंगल के कलाकर्म पर श्री प्रवेश भारद्वाज के निर्देशन में एक डाक्युमेंट्री फ़िल्म भी बनाई जा चुकी है। कचंगल के चित्र भारत सहित जर्मनी, नेपाल, फ्रांस, अमेरिका और संयुक्त अरब अमीरात में भी प्रदर्शित व संगृहीत किए जा चुके हैं। वर्तमान में मनोज कचंगल ग्रेटर नोयडा में रहकर अपने कलाकर्म में संलग्न हैं।

संपर्क: 09999596555
e-mail: kachangal@gmail.com

भ्रष्टाचार एक भ्रम है

गोपाल चतुर्वेदी

अन्ना और उनकी टोली कुछ भी कहे, भ्रष्टाचार एक भ्रम है। वैसे ही जैसे पीपल का भूत या फिर काले धन की लूट। किसी ने भ्रष्टाचार, भूत या काला धन देखा है? मुरारी फ़ुरसत में हैं, यानी नौकरी से रिटायर हो चुके हैं और भारत की बढ़ती औसत आयु के साक्षात् प्रमाण हैं। सेहत और नसीहत में युवाओं से आगे हैं। हमने उन्हें बताया कि भ्रष्टाचार अवैधानिक लेन-देन है, क़ीमत के ऊपर का कमीशन है, कोई भैंस तो है नहीं कि चलती-फिरती या पगुराती नज़र आ जाए। उसी तरह काला धन क्या कौआ है कि उसकी काँव-काँव सुनाई दे? बड़े स्तर की कर-चोरी काले धन का पर्याय है। सरकार कभी काजल तो कभी कोयले की कोठरी है, जो उसमें जाता है, मुँह काला करवाता है। मुरारी को ज़ुबान लड़ाने की गुस्ताख़ी कतई नाकाबिले बर्दाश्त है। उन्होंने हमें घूरा, बोले कि इथोपिया के क्राइस्ट काले और वृंदावन के कृष्ण साँवरे हैं, पर क्या दुनिया के किसी मुल्क की करैन्सी काली है? भैया, रुपैया हर देश का गोरा है। कालुओं के देश में उसे काला कहना अधिकांश आबादी का अपमान है।

ऐसे भी यह खोट मानसिकता की है। समृद्ध हो या ग़रीब, कहीं उसे ख़ुद से ज़्यादा पैसे वाला दिखा नहीं कि उसके पेट में दर्द होता है। मन में जलन का अफरा उठता है। उसके पास किसी अन्य अपराध जैसे वसूली, डकैती, हत्या, फिरौती का सबूत तो है नहीं। बस काले धन की साक्ष्यहीन गाली है। इसे बक के संतोष से वह क्यों बाज आए? हमने उन्हें याद दिलाया कि काले धन के विश्वस्त आँकड़े हैं। भारत सरकार ने तो कई हज़ार करोड़ पर टैक्स तक कमाया है। मुरारी ने बुरा-सा मुँह बनाया जैसे कच्चा करेला चबा लिया हो और फिर हमारी बोलती बंद की–'आँकड़ों की बात मत करिए। उनके अनुसार हमारे घर के सामने सड़क है, दस क़दम पर प्राइमरी पाठशाला है, बिजली है, पानी है।' उन्होंने काला धन विदेशी बैकों में जमा करनेवालों के कसीदे पढ़े–'हमें तो ऐसों पर गर्व है। कालुओं की कमाई से गोरों के बैंक चलें, इससे बड़ी उपलब्धि क्या हो सकती है?'

हमने उन्हें टोका यह कहकर कि विदेशी बैंकों में देसी सत्ताधारियों की दौलत है, इसीलिए सरकार नाम नहीं बताने पर आमादा है। उन्होंने कहा कि कर वसूली आयकर विभाग का अधिकार है और टैक्स-चोरी हर नागरिक का कर्त्तव्य। नेता भी तो हम सबके समान इंसान हैं। वह नालायक थे तो नेता बने, हम काबिल थे तो बाबू। कमाई उनकी प्राथमिक ज़रूरत है। उन्हें अपनी निखट्टू पीढ़ियों का इंतज़ाम करना है, प्रजातंत्र बचाने को चुनाव लड़ना है। आजकल वादे सस्ते हैं, वोट महँगे। जनतंत्र की क़ीमत जनता नहीं तो क्या नेता चुकाएँगे?

हम खीजकर उनसे बोले कि दफ़्तर का हर कुत्ता आज, भ्रष्टाचार भौंकता है और बिना उसे हड्डी डाले कोई भी काम संभव नहीं है। उनके चेहरे पर शिकन तक न आई, 'भेंट-चढ़ावा अँग्रेज़ों के वक़्त से चली आ रही रवायत है। परंपरावादी देश में इस पर क्या एतराज? सरकार को इसे अनौपचारिक से औपचारिक बनाकर हर काम की नियत दर और उस पर आयकर तय कर देना चाहिए। जनता का ड्राइविंग लाइसैंस, राशनकॉर्ड, जाति प्रमाण-पत्र का काम भी आनन-फ़ानन हो और बाबू का धन-उपार्जन भी।'

मुरारी का मानना है कि यह सुविधा का द्विपक्षीय सौदा है, एक का काम होने का, दूसरे का उसे करने का। कतई आलू-भटा खरीदने की तरह। वह क्या फ्री में उपलब्ध हैं? चलते-चलते वह शिकायत करते हैं कि जो है ही नहीं जैसे भ्रष्टाचार, तो फिर उसके विरुद्ध अन्ना जैसों का इतना हाहाकार क्यों?

दिखाऊ नैतिकता के दु:ख

दुनिया-जहान जानता है, भारत एक नैतिकता-प्रधान देश है। गुरु, नेता, साधु-स्वामी का तो काम ही उपदेश झाड़ना है। यहाँ तो वकील, ठग, चोर, गिरहकट तक बोलें तो आदर्श वाक्य ही उच्चारते हैं। अगर सुनी-सुनाई से उलट हुए भोगे यथार्थ का सच न हो, तो अलीगढ़ का ताला उद्योग ठप हो जाए। अपनी सहकारिता समिति में कई आवासीय दड़बे हैं। कहने को सिक्योरिटी गार्ड भी हैं जैसे शहर में पुलिस है। सोसाइटी में हर दूसरे-तीसरे दिन ताले टूटते हैं और शहर में दिन-दहाड़े अपहरण, बलात्कार, लूट-पाट आम हादसे हैं। हमारे ज्ञानी मित्र आतताई हमें ज्ञान देते हैं-'इससे नैतिकता का नियम ही साबित होता है। हर नियम को सिद्ध करने को अपवाद तो होने ही होने।'

हमें शक है। किसी भी मसले के पक्ष या विपक्ष में पैरवी आतताई की सिफ़्त है। तर्क-कुतर्क उनके वक़्ती मूड पर मयस्सर है वर्ना वह प्रोफ़ेसर कैसे होते! अभी कल ही वह भारत को 'पल-पल घोटाला-झाला' प्रक्रिया का अंतर्राष्ट्रीय सरगना निरूपित कर रहे थे और आज वह घुट्टी में घुली राष्ट्रीय नैतिकता के प्रवक़्ता बन बैठे हैं। मुमकिन है कि हर सवाल पर नज़रिए और मानसिकता का लिजलिजा लचीलापन सफलता की पहचान है। इसीलिए आतताई हर ख़ेमे में लोकप्रिय हैं। हड़ताल में वह छात्रों के साथ भी हैं और उसे कड़ाई से कुचलने के प्रशासन के प्रयासों के साथ भी। किसी भी मसले पर अड़ियल दृष्टिकोण रखना व्यक्ति की वज्रमूर्खता का परिचायक है।

समय परिवर्तनशील है, तो आदमी क्यों न हो! अपन पुरखों को कोसते हैं। सच, ईमानदारी जैसे सड़े-गले मूल्यों के संस्कार देकर हमें ऐसा गधा बना दिया है कि अब अपन न घर के हैं, न दफ़्तर के। बिना दहेज़ के आज कोई शादी संभव है क्या? कोई माने-न-माने, अपनी हुई है। लिहाजा, घर सूना है। क़िश्तों पर टी॰वी॰, फ्रिज़, सोफ़ा आया है, वह भी हमारे पिताश्री की नाराज़ी के वाबजूद। उनकी दृढ़ मान्यता है कि उधार सुखी परिवार की क़ैंची है। सरकार जैसी हरामख़ोर संस्था को उधार शोभा देता है, व्यक्ति को नहीं। फ्रिज नहीं है तो, सुराही का पानी क्या बुरा है, घर में टी॰वी॰ का न होना एक नियामत है। पारस्परिक वार्तालाप होगा। टी॰वी॰ देखने में दीदे फोड़ने से बेहतर है कि घर से निकलो। लोगों से मिलो-जुलो। उन्हें पता ही नहीं है कि आजकल इंटरनेट युग है। सब अपने-अपने स्व-निर्मित 'नैट' में क़ैद हैं।

गोपाल चतुर्वेदी

जन्म : 15 अगस्त 1942
शिक्षा : एम॰ए॰ (अँग्रेज़ी साहित्य)
कार्यक्षेत्र : सदस्य, भारतीय लोकप्रशासन संस्थान तथा केंद्रीय हिंदी समिति, नई दिल्ली। संप्रति : कार्यकारी अध्यक्ष, उ॰प्र॰ भाषा संस्थान
कृतियाँ : काव्य-संग्रह -कुछ तो हो, धूप की तलाश। व्यंग्य-संग्रह -अफ़सर की मौत, दुम की वापसी, खंबों के खेल, आज़ाद भारत में कालू, फ़ाइल पढ़ि-पढ़ि, गंगा से गटर तक, दाँत में फँसी कुर्सी, राम झरोखे बैठ के, फ़ार्म-हाउस के लोग, नैतिकता की लँगड़ी दौड़, भारत और भैंस, जुगाड़पुर के जुगाड़ू, आदमी और गिद्ध, धाँधलेश्वर, इक्यावन श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, खरी-खोटी, कुरसीपुर के कबीर
सम्मान-पुरस्कार : हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा श्रेष्ठ कृति पुरस्कार 1985-86 तथा 1988-89; रेलवे बोर्ड द्वारा प्रेमचंद सम्मान 1986; अखिल भारतीय भाषा सम्मेलन पुरस्कार 1991-92; हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा साहित्यकार सम्मान 1995-96; कुलदीप गोसाईं स्मृति पुरस्कार 1998; सेठ गिरधारीलाल सराफ ठिठोली पुरस्कार 1999; सहस्राब्दी विश्व हिंदी सम्मान 2000; हिंदी भवन द्वारा व्यंग्यश्री लाइफटाइम अचीवमेंट पुरस्कार 2001; उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ द्वारा साहित्यभूषण 2001; हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा साहित्यिक कृति सम्मान 2003; माध्यम जयपुर द्वारा अट्टहास शिखर सम्मान 2006; उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का हिंदीगौरव सम्मान 2007; अखिल भारतीय भाषा सम्मेलन का भाषाभूषण सम्मान 2008; अखिल भारतीय अंतरराष्ट्रीय मंचीय कवि पीठ द्वारा शारदा सम्मान 2009; पता : 9/5, राणाप्रताप मार्ग, लखनऊ (उ॰प्र॰)
दूरभाष: 0522-2202619; मोबाइल: 09335811907, 09919999923

नज़दीकी रिश्तेदारों तक को संबंध निभाने की आवाजाही रास नहीं आती है। त्योहार, उत्सव, समारोह, जन्म-मृत्यु पर मिल लिए, क्या इतना काफ़ी नहीं है।

क़िश्तें चुकाते-चुकाते अपने दाल-रोटी के लाले हैं। हमें लगता है कि पिताश्री दहेज़ का सौदा कर लेते तो हमें यह व्यर्थ के पापड़ न बेलने पड़ते। हमें यक़ीन है, एक अदद पत्नी के साथ हम कार न सही, स्कूटर-पति तो बन ही जाते। हम रोज़ अपने दहेज़-याफ़्ता साथियों से मिलते हैं। अच्छी-ख़ासी क़ीमत पर बिकने के पाप की उनके चेहरे पर शिकन तक नहीं है, अपराध-बोध जैसी भावना का तो प्रश्न ही नहीं उठता है। एक तो शान से बताते हैं कि उनका कितना मोल लगा! कहते हैं कि जब सचिन जैसी हस्तियों की 'इंडिया पैसिया लूट' याने आईपी-एल में बोली लगती है तो उन्हें अपनी बिक्री पर फ़क्र न हो! हमें ऐसे हँसते-बोलते नक़दी और सामान पाए साथियों से ईर्ष्या होती है। कभी-कभी मन में आता है कि चोरी-छिपे दहेज़ के बाज़ार में बिकें और दूसरी शादी क्यों न कर लें! फिर जेल और सामाजिक भर्त्सना से मन काँप उठता है। अपने-ऐसे सिर्फ़ सहने के लिए बने हैं, करने के लिए नहीं। संस्कारों में पले-बढ़े कायरों की आज के साहसिक ज़माने में सिर्फ़ यही नियति है।

दूध का धुला लोकतंत्र

हमने देखा है। बड़के नेताओं का नीतिशास्त्र जनता से कुछ अलहदा है। मसलन, सामान्य भारतीय परिवार में बच्चों को सच बोलने की नसीहत दी जाती है। इस देश में सामान्य से हटकर, समृद्ध, असामान्य क़िस्म के जो इंसान हैं, उनके बारे में कोई क्या कह सकता है? क्या पता, नेता की मानसिकता उनसे मेल खाती है? उसका यक़ीन झूठ की थोक तिजारत में है। वह असत्य का आर्कमिडीज है। नए-नए झूठ का अन्वेषण कोई उससे सीखे। जैसे सनी लियोन नामक पार्न कलाकार, अपनी कला के प्रति गंभीर और समर्पित है, नेता अपने झूठ के। एक दल का वादा है, रामराज्य लाएगा। इक्कीसवीं सदी में रथ व राज सूर्ययज्ञ की कल्पना और उस पर विश्वास, नेता नामक अजूबे के अलावा कोई अन्य कर सकता है क्या? दूसरा विकास का स्वघोषित विश्वनाथ है। भूख, ग़रीबी, बेरोज़गारी, अभाव, भ्रष्टाचार सबका निदान उसकी ज़ेब में है। किसी जादूगर की तरह वह मुट्ठी खोलता है और उसमें से आरक्षण का चमत्कारी हल निकलता है। वह कोटा का मसीहा है। उसका ख़्याल है कि पिछड़ों का मत लेना है तो कोटा देना है। अल्पसंख्यकों को पटाना है तो उनको आरक्षण का झुनझुना थमाना है। कोटा और कुरसी उसके लिए पर्यायवाची हैं।

सबकी मतदाता को मूर्ख बनाने की अपनी-अपनी जुगत और महारत है। अलग-अलग रास्ते हैं। किसी के पास पारिवारिक योगदान की पूँजी है। शहादत की विरासत है। कोई दलितों का तारनहार है। एक की गर्वोक्ति है कि उसने जो कहा, वह किया है।

जनता के सेवकों ने सेवा के धंधे में कैसे करोड़ों कमाए हैं, यह एक पहेली है। कुछ बताते हैं कि सत्ता है तो सेवा है। सेवा है तो मेवा है। मेवा है तो घोटाले हैं। घोटाले हैं तो जाँच है। जाँच है तो तंत्र है। तंत्र का इकलौता मंत्र दूध का दूध और पानी का पानी है। दिक़्क़त यही है। पानी में कितना दूध, कितना करप्शन, कितनी दबंगई से हड़पी ज़मीन जैसे महत्त्वपूर्ण तथ्य हेरते, निर्धारित करते-करते एक से दूसरा इलैक्शन आ जाता है। नेता की कमाई में करोड़ों और जुड़ता है। उसकी बड़की, ऊँची गाड़ियों के कारवाँ में और इजाफ़ा होता है। पंचायत का हो या छात्र-संगठन का, नेता के पास एक अदद एस॰यू॰वी॰ होना ही होना। यही उसकी पहचान है। आम से ख़ास होने का अहसास है। आगे तरक़्क़ी करते-करते ही कल तक सड़क पर चप्पल चटकाने वाला, भयंकर रूप से कैसे असुरक्षित हो जाता है यह उसकी करोड़ों की कमाई की तरह डॉक्टर सचान की आत्महत्या-सा राज़ है।

गाड़ी में बैठा या ज़मीन पर खड़ा, अत्याधुनिक हथियारों से लैस सुरक्षाकर्मियों से घिरा आदमी हमें खूँखार अपराधी लगता है। जानकार बताते हैं कि यह नेता है। हमें भ्रम है कि यह शायद अपने कुकर्मों के अपराध-बोध से डरा-सहमा है। नहीं तो जनसेवक को इतने फ़ौज-फाँटे की क्या दरकार? ज्ञानी अपना मुगालता दूर करते हैं कि ऐसा कुछ नहीं है। नेता जबरजंग है। सुरक्षाकर्मियों की मौजूदगी इसका प्रतिष्ठा-चिह्न है। जित्ता बड्डा नेता, उतनी ज़्यादा सुरक्षा।

हम सोचते हैं कि हमारी चुनाव-प्रक्रिया इतनी पारदर्शी और निष्पक्ष है कि दूध से धुली है। यह दाग़ी नेताओं से महिमा-मंडित जनतंत्र कब दूध से धुला होगा?

आदमी और कुत्ते की नाक

डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल

तो साहब! करना भगवान का कुछ ऐसा हुआ कि हमारी बात भगवानसिंह की समझ में आ ही गई और वह अच्छी-भली नौकरी को छोड़ने और अपने सहकर्मियों-सहित सामूहिक इस्तीफ़ा देने की ज़िद छोड़ने को तैयार हो गया।

हमने उसे समझाया कि अरे भगवानसिंह अभी चूँकि पशुओं की पाशविकता आदमी की पाशविकता के बराबर नहीं आई है और वे अभी आदमी से ज़्यादा संवेदनशील हैं, इसलिए हमारी सरकार पशुओं पर अधिक ध्यान दे रही है। उन पर ख़र्च भी अधिक कर रही है। तुम थोड़ा धीरज रखो, आदमी की संगत में रहते-रहते जब पशुओं की पाशविकता कुछ और बढ़ जाएगी और वे भी आदमी की तरह पूरी तरह संवेदनहीन हो जाएँगे तो स्थिति स्वत: बदल जाएगी। तब तुम्हें शिकायत का कोई मौक़ा नहीं मिलेगा।

भगवानसिंह समझदार तो नहीं है, पर समझदारी की बात मान जाता है। वह मान गया और अपने भीतर उठ रहे असंतोष को दबाने में लग गया। यह तो आप जानते ही हैं कि इधर बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में आदमी के भीतर से दया और करुणा का ज्वार उठना तो लगभग बंद हो गया है, हाँ असंतोष अवश्य उठता है और ख़ूब ज़ोर से उठता है। लेकिन अक्सर देखने में यह आता है कि अगर असंतोष व्यक्तिगत टाइप का हो तो व्यक्ति स्वयं ही इसका गला घोटकर शांत हो जाता है और अगर दुर्भाग्यवश सामूहिक हो तो सरकार लाठी-गोली चलवाकर इसे शांत कर देती है। हमने भगवानसिंह को यह सलाह भी दी कि अगर तुम अपने असंतोष से जनता की सहानुभूति नहीं जोड़ सके तो ख़तरे में पड़ जाओगे, क्योंकि जनतंत्र में जनता की सहायता के बिना असंतोष का वृक्ष फल-फूल नहीं सकता। जनता की सहायता के बिना यह वृक्ष फूलता तो ख़ूब है, पर फलता बिलकुल नहीं, इसलिए हर काम जनता के नाम पर किया करो, क्योंकि जनता का नाम हर पुण्य-पाप के लिए रामबाण है।

हमने भगवानसिंह को ध्यान दिलाया कि शहर का मशहूर औषधि-विक्रेता चोखेलाल जनता के नाम पर ठाठ से जनता मैडिकल स्टोर चला रहा है और नक़ली दवाएँ बेच-बेचकर बड़े आराम से रोगियों को मरघट पहुँचा रहा है। हमने कहा कि जनता हर काम में अपना नाम जुड़ा देख ख़ुश हो जाती है, लेकिन चूँकि तुम्हारा असंतोष जनअसंतोष नहीं बना है, इसलिए सफलता संदिग्ध है।

आपकी जानकारी के लिए यहाँ यह अर्ज करना ज़रूरी है कि भगवानसिंह और उसके सहकर्मियों में यह असंतोष एक कुत्ते को लेकर उभरा था। भगवानसिंह और उसके सहकर्मियों को इस बात पर कड़ी आपत्ति थी कि सरकार एक कुत्ते पर बीस लाख रुपए साल ख़र्च कर रही है, जबकि उनका सारा वेतन, महँगाई भत्ता तथा टी॰ए॰ डी॰ए॰ सब मिलकर भी एक लाख रुपए की सीमा तक नहीं पहुँचते। भगवानसिंह का कहना था कि यह हमारे साथ घोर अन्याय तो है ही, मानव-जाति का अपमान भी है। भगवानसिंह को गिला था, जो सुख-सुविधाएँ कुत्ते को प्राप्त हैं, वह आदमी को प्राप्त नहीं हैं। प्रत्येक दिन इन महाशय यानी कुत्ते साहब के स्वास्थ्य की जाँच करने के लिए डॉक्टर राउंड लगाता है। उसे बढ़िया से बढ़िया टॉनिक दिए जाते हैं, बारह किलो दूध रोज़ उतार दिया जाता है उसके पेट में, फिर मुर्ग़े-बकरे इसके अतिरिक्त। अब रहा काम का सवाल तो काम धेले बराबर नहीं।

भगवानसिंह को इस बात पर ग़ुस्सा था कि जहाँ सारा दिन पहरा देते-देते उसकी टाँगें लकड़ी की तरह अकड़ जाती हैं, वहाँ कुत्ता निर्धारित क्षेत्र के सुबह-शाम दो राउंड लेकर सारा दिन आराम से आँखें मूँदे पड़ा रहता है और सरकार उस पर ख़र्च करती है पौने दो लाख रुपए

महीना, जबकि हम जैसे भागवानों, बेगानों के हिस्से में पगार के नाम पर आते हैं केवल बाईस सौ रुपए। कुत्ते के मुक़ाबले में ये आदमी का अपमान नहीं है क्या? भगवानसिंह ने हमसे पूछा और बार-बार अपना असंतोष मुखरित करता रहा। पर हम असंतोष में नौकरी छोड़ देने या इस्तीफ़ा देने की उनकी बात से सहमत नहीं हुए। यही समझाते रहे भगवानसिंह को कि फिलहाल कुत्ता आदमी के मुक़ाबले में ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है, उसमें अभी आदमी से कम पाशविकता है, इसलिए हमारी कुत्ता-प्रिय सरकार कुत्तों पर अधिक ख़र्च कर रही है, धीरे-धीरे स्थिति बदल जाएगी। तुम धीरज रखो और कोशिश करो कि कुत्ता आदमी की संगत में रहते-रहते आदमी की तरह संवेदनहीन हो जाए, तब तुम देखोगे कि छँटनी का अवसर आने पर सबसे पहले कुत्तों की छँटनी होगी, बाद में तुम्हारी।

पर भगवानसिंह इतना लंबा इंतज़ार करने को तैयार नहीं हो रहा था।

अब आप हमसे यह पूछिए कि इस सारे झंझट की पृष्ठभूमि आख़िर थी क्या? लीजिए साहब! हम आपको बताएँ कि गत वर्ष पहले हमारे शहर का एक स्थान रातोंरात विवादित हो गया। हम भारत के लोग, बल्कि यों कहना चाहिए कि हम भारतवासियों के नेता लोग गई-गुज़री चीज़ों को विवादित बनाने में काफ़ी दक्ष होते हैं, आपके द्वार के सामने पड़ा हुआ कूड़े का ढेर तक, जब कोई चाहे विवादित हो सकता है। आपकी पालतू मुर्ग़ी पड़ोसी के घर चली जाने पर विवादित हो सकती है। और तो और क़ब्र का वह मुर्दा भी किसी-न-किसी वक़्त विवादित हो सकता है, जो संसार से मुँह मोड़कर कभी का जा चुका है। वादविवाद करने और चीज़ों को विवादित बनाने में हम लोगों की विशेष रुचि है।

फिलहाल कुत्ता आदमी के मुक़ाबले में ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है, उसमें अभी आदमी से कम पाशविकता है, इसलिए हमारी कुत्ता-प्रिय सरकार कुत्तों पर अधिक ख़र्च कर रही है, धीरे-धीरे स्थिति बदल जाएगी। तुम धीरज रखो और कोशिश करो कि कुत्ता आदमी की संगत में रहते-रहते आदमी की तरह संवेदनहीन हो जाए, तब तुम देखोगे कि छँटनी का अवसर आने पर सबसे पहले कुत्तों की छँटनी होगी, बाद में तुम्हारी।

हाँ तो भगवान आपका भला करे, हमने आपको बताया था कि हमारे शहर का एक ऐतिहासिक स्थल रातोंरात विवादित हो गया। सोए थे तो निर्विवाद था, उठे तो विवादित।

एक समूह ने दावा किया कि इस स्थल पर लाल पत्थर का जो स्तंभ खड़ा है, वह ऐतिहासिक मीनार है नादिरशाही, जबकि दूसरे गुट का कहना था कि नादिरशाही मीनार नहीं, अशोक-स्तंभ है। इसे सम्राट् अशोक द्वारा निर्मित कराया गया था। इस तरह के दावे और प्रतिदावे के बीच भारी विवाद खड़ा हो गया। आप यह तो जानते ही हैं, विवाद फिर विवाद जब होता है तो बढ़ता है और जब बढ़ता है तो बढ़ता ही चला जाता था। पहले यह विवाद शहर की सीमा के भीतर हुआ, फिर शहर की सीमाएँ तोड़कर आगे बढ़ा और इसने दर्जनों शहरों को अपनी चपेट में ले लिया।

एक समूह ज़िद पकड़ गया कि यह ऐतिहासिक मीनार नादिरशाह की है। दूसरे ने रट लगाई कि यह मीनार नहीं, सम्राट् अशोक की लाट है। अब सवाल यह पैदा हुआ कि यह झगड़ा किस तरह तय हो? पत्थर के अंदर आवाज़ तो होती नहीं, जो स्वयं यह बता दे कि हमें धरती पर किसने स्थापित किया था? स्तंभ के पत्थर चुप रहे, आदमी बोलते रहे। पहले बोले, फिर चिल्लाए, फिर ग़ुर्राए, फिर उतर आए युद्ध के मैदान में। दोनों की कमान उनके शुभचिंतक नेताओं ने सँभाल ली। धीरे-धीरे मामला जनभावना से जुड़ गया और यह तो आप जानते ही हैं कि जब कोई मामला जनभावना से जुड़ जाता है तो उसका सामना करना मुश्किल हो जाता है। ऐसे में न कोई सांत्वना काम आती है और न प्रस्तावना। जनभावना चीज़ ही ऐसी है भाई, यह दबाई नहीं जा सकती, भुनाई अवश्य जा सकती है।

तो साहब, विवाद का बढ़ना था कि कितने ही जुगाड़ी इस जनभावना को भुनाने के लिए निकल पड़े। आपको मालूम है कि यह तो एक ऐसा करेंसी नोट है कि फट-फटकर चलता रहता है, बल्कि जितना फटता है, उतना ही ज़्यादा चलता है।

स्तंभ को लेकर जब दोनों पक्षों ने अपनी-अपनी आस्तीनें चढ़ाईं तो सारा शहर भय के मारे काँपने लगा। एक पक्ष ने विवादित स्थल से एक पुराना पत्थर बरामद कर दावा किया कि यह अशोक

महान के युग का है और उस पर अशोक-युग के चिह्न खुदे हैं। यह देखना था कि दूसरा पक्ष भी पीछे नहीं रहा। उसने भी विवादित स्थल से एक शिला निकालकर दावा ठोंक दिया कि इस पर नादिरशाही दौर की निशानियाँ साफ़ दिखाई दे रही हैं। विवाद में विवाद पैदा हुआ तो विवादों की झड़ी लग गई। सवाल पैदा हुआ कि सम्राट् अशोक को इस छोटे-से शहर में स्तंभ बनाने की ज़रूरत क्यों आ पड़ी थी? क्या यह उसके राज्य की सीमा के भीतर था? फिर यह सवाल पैदा हुआ कि अशोक महान के समय में यह शहर था भी कि नहीं था। सवालों के गर्भ से जब सवाल-ही-सवाल पैदा होने लगे तो विरोधी पक्ष ने प्रश्न किया कि नादिरशाह अपने आक्रमण के समय इधर से गुज़रा था कि नहीं! अगर गुज़रा था तो इतिहास में इसका सबूत है कि नहीं है?

तो साहब! पुरातनविद् जुट गए बाल की खाल निकालने में, किंतु बाल इतना पुराना था कि खाल सूखकर उससे ऐसी चिपट गई थी कि छूटती ही नहीं थी।

तो भाई साहब! यह तो आप जानते ही हैं कि जो काम तर्क नहीं कर पाता, वह कुतर्क आसानी से कर दिखाता है। तर्क चुक गए तो कुतर्क सामने आए। एक पक्ष ने सरकार से माँग की कि इस खंभे को अशोक स्तंभ घोषित करो, दूसरे ने ज़िद्द की कि इसे नादिरशाही मीनार घोषित कर वक्फ़ बोर्ड को सौंपा जाए। सरकार दोनों पक्षों की माँगों के बीच में सैंडविच होने लगी। विवादों की घिचपिच में सरकार का सैंडविच होना कोई आश्चर्यजनक तो होता नहीं है। जब कुछ बन नहीं पड़ा तो सरकार ने समझौता-वार्ता के लिए दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों को आमंत्रित कर लिया। यह तो सरकार जानती ही थी कि वह विवाद ही क्या, जो समझौता-वार्ता से हल हो जाता है और विवाद भी ऐसा-वैसा नहीं, ऐतिहासिक, धार्मिक! यह तो स्पष्ट ही था कि समझौता-वार्ता को असफल होना है, सो वह असफल हो गई, वैसे भी सरकार जब किसी से कोई समझौता-वार्ता करती है तो असफल होने के लिए ही करती है। वह या तो स्वयं असफल हो जाती है या उसे असफल कर दिया जाता है, पर सरकार अगर वाकई सरकार है तो अपनी कोशिश बंद नहीं करती। उसने आगे भी कई समझौता-वार्ताएँ कीं, लेकिन असफल।

तो फिर साहब! एक टूटे-फूटे स्तंभ को लेकर दोनों पक्षों का धर्म संकट में पड़ गया। भारत के लोग

डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल

जन्म : 14 जुलाई 1944; संभल (मुरादाबाद) उ॰प्र॰
मौलिक लेखन : सन्नाटे में गूँज, भीतर शोर बहुत है, मौसम बदल गया कितना, रोशनी बनकर जिओ, शिकायत न करो तुम, आदमी है कहाँ (ग़ज़लें), नीली आँखें और अन्य एकांकी, जिज्ञासा और अन्य कहानियाँ, बाबू झोलानाथ, राजनीति में गिरगिटवाद, मेरे इक्यावन व्यंग्य, समय एक नाटक (ललित निबंध), दंगे : क्यों और कैसे, विश्व आतंकवाद : क्यों और कैसे, आओ अतीत में चलें, मानवाधिकार : दशा और दिशा, बच्चों के हास्य-नाटक, बच्चों के रोचक नाटक, बच्चों के शिक्षाप्रद नाटक, ग्यारह नुक्कड़ नाटक, नारी : कल और आज, पर्यावरण : दशा और दिशा, हिंसा : कैसी-कैसी, वादविवाद प्रतियोगिता : पक्ष और विपक्ष, मंचीय व्यंग्य एकांकी, अक्षर हूँ मैं (काव्य), मेरी हास्य-व्यंग्य कविताएँ, हिंदी तुकांत कोश; प्रधान संपादक शोध दिशा; पुरस्कार-सम्मान : 'मानवाधिकार : दशा और दिशा' पर राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, भारत सरकार का प्रथम पुरस्कार; डॉ॰ रत्नलाल शर्मा स्मृति न्यास, दिल्ली का श्रीमती रतन शर्मा बालसाहित्य पुरस्कार; 'आओ अतीत में चलें' पर उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान का सूर पुरस्कार, समन्वय सहारनपुर का सारस्वत सम्मान, 'मंचीय व्यंग्य एकांकी' पर राष्ट्रधर्म गौरव सम्मान; उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ का एक लाख रुपए का 'साहित्यभूषण' सम्मान; केंद्रीय हिंदी निदेशालय (मानव संसाधन विकास मंत्रलय; नई दिल्ली का एक लाख रुपए का शिक्षा पुरस्कार; शोध कार्य : देश के विविध विश्वविद्यालयों में 15 से अधिक शोधकार्य संपन्न।

पता : 16 साहित्य विहार, बिजनौर (उ॰प्र॰) 246701; दूरभाष : 0124-4076565, 07838090732; 01342-263232, 09412712789

जानते हैं कि धर्म का संकट में पड़ जाना हर संकट से कहीं ज़्यादा गंभीर घटना होती है। आर्थिक संकट हो, सामाजिक संकट हो, राजनीतिक संकट हो, इन सबका कोई हल निकल ही आता है, किंतु अगर धार्मिक है तो सरकार लाख माथापच्ची करे, उसका हल नहीं निकाल पाएगी और जहाँ तक सवाल धर्म का है, वह तो थोड़े-थोड़े अंतराल में संकट में पड़ता ही रहता है। वह धर्म क्या, जो संकट में न पड़े।

संकट बढ़ा तो सरकार के हाथ-पाँव फूले, उसने धर्मात्माओं की चौखट पर माथा टेका, पर कहीं कोई सुनवाई नहीं हुई।

दोनों पक्ष आमने-सामने आ गए, मारकाट हुई, ख़ून बहा। ऐसे में सरकार अपनी परंपरा के अनुसार काम करती नज़र आई। उसने विवादित स्थल पर पुलिस भेजकर सौ राउंड गोलियाँ चलवाईं। कितने मरे? यह बात भी विवादित हो गई। सरकार के हिसाब से दो, ग़ैर-सरकार के हिसाब से दो सौ। स्तंभ-विवाद में गोली-विवाद और जुड़ गया।

एक पक्ष लाशों को लेकर गली-गली घूमा! जनभावनाओं को भड़काना तो था ही, आगे चलकर भुनाना भी था।

बहुत भारी तनाव पैदा हो गया साहब!

ऐसे में एक तीसरे पक्ष के सक्रिय होने की सूचना सरकार को मिली। गुप्तचर एजेंसियों ने रिपोर्ट दी कि कुछ शरारती तत्त्व विवादित स्तंभ को बम से उड़ाने का षड्यंत्र रच रहे हैं। यह सूचना मिलते ही एक बार फिर सरकार के हाथ-पाँव फूल गए।

सरकार ने घोषणाओं पर घोषणाएँ कीं कि जनता शरारती तत्त्वों से चौकस रहे। इनकी सूचना मिलते ही तुरंत अपने निकटतम पुलिस थाने से संपर्क किया जाए। सरकार ने कहा कि शांति भंग करनेवाले शरारती तत्त्वों का कोई धर्म नहीं होता, जबकि सत्यता तो यह है कि असली यानी एकदम शुद्ध यदि किसी का धर्म होता है तो वह शरारती तत्त्वों का ही होता है। हमारा-आपका क्या धर्म! चुपचाप बैठै माला जप रहे हैं। न कोई शोरशराबा, न कोई हंगामा, न आगज़नी, न पथराव, भला यह भी कोई धर्म हुआ!

हाँ तो साहब! शरारती तत्त्वों द्वारा विवादित स्तंभ को बम से उड़ा देने की साज़िश का पता लगते ही सरकार ने मौक़े पर पुलिस और पी॰ए॰सी॰ तैनात कर दी। आदेश हुआ कि विवादित स्थल की सुरक्षा के लिए दिनरात उसके चारों ओर पहरा लगाया जाए, ताकि विवादित स्थल भी बना रहे और विवाद भी।

इसी सशस्त्र सुरक्षा बल में हमारा पड़ोसी भगवानसिंह भी शामिल था, जो इस समय हमारे सामने बैठा कुत्ते से अपनी ईर्ष्या का विष उगल रहा था।

भगवानसिंह का कहना था सरकार ने विवादित स्तंभ की सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए सेना का एक कुत्ता भी तैनात कर रखा है, जो प्रातः सूरज निकलने के साथ ही इस पूरे क्षेत्र का सूँघ-सूँघकर निरीक्षण करता है। ऐसा ही निरीक्षण वह दूसरी बार सूरज अस्त होने के समय करता है, ताकि यह पता लग सके कि कोई शरारती तत्त्व किसी जगह कोई विस्फोटक वस्तु तो नहीं रख गया है। बाक़ी सारे समय कुत्ता आँखें मूँदे सोता रहता है।

पूरी कहानी पर दृष्टिपात करते हुए हमें लगा कि भगवानसिंह का एक दुःख यह भी था कि सरकार आदमी से ज़्यादा कुत्ते को विश्वसनीय मानती है। यह दुःख तो है ही कि कुत्ते को खाने के लिए सरकार मलाई-रबड़ी देती है और उसे सूखी रोटी। कुत्ते के सामने आदमी की हेठी होते देख भगवानसिंह की आत्मा ने उसे धिक्कारा। उसने सोचा, वह आदमी क्यों बना, कुत्ता क्यों न बना। कुत्ता बनता तो बाईस सौ की जगह सरकार उस पर भी पौने दो लाख रुपए मासिक ख़र्च कर रही होती। तभी खीजकर वह और उसके कुछ और साथी नौकरी से त्यागपत्र देने के लिए तैयार हो गए।

हमने भगवानसिंह से कहा कि अरे भगवानसिंह, भगवान तेरा भला करे, इस्तीफ़े-विस्तीफ़े से कुछ होने-हुवाने वाला नहीं है। थोड़ा धैर्य रख। विशेषज्ञों का विचार है कि कुत्ते की नाक आदमी की नाक से अधिक संवेदनशील होती है। लेकिन हम तुझे बताते हैं कि प्राचीनकाल में आदमी की नाक कुत्ते की नाक से कहीं ज़्यादा संवेदनशील हुआ करती थी, जो धीरे-धीरे ठस होती गई। हमें विश्वास है कि अगर तुम लोग कुत्ते को सारे दिन एकांत में सोने न दो और उसे निरंतर अपनी संगत में रखो तो जहाँ उसकी पाशविकता में वृद्धि होगी, वहीं उसकी नाक तुमसे भी ज़्यादा ठस हो जाएगी। तब देख लेना, सरकार तुम पर अधिक विश्वास करेगी, कुत्ते पर कम और इस तरह तुम जैसा सस्ता आदमी इतने महँगे कुत्ते के हाथों अपमानित होने से बच जाएगा।

हमें लगा कि मोटी समझवाला भगवानसिंह हमारी बात काफ़ी कुछ समय गया है और त्यागपत्र देने का इरादा छोड़ ड्यूटी पर जाने की तैयारी करने लगा है।

जिहाद जारी है

महेशचंद्र द्विवेदी

मधु चिनरू
सियालकोट जेल
7 फरवरी, 2004
संपादक महोदय,

यदि मेरे भाग्य से मेरी यह दुखभरी कहानी आपके पास तक पहुँच जाए, तो कृपा कर इसे प्रकाशित अवश्य कर दें। हो सकता है कि आपकी इस अहेतुकी कृपा से मेरी यह व्यथा-कथा भारत के प्रबुद्ध नागरिकों तक पहुँचकर वहाँ के शासकों को मुझे इस नारकीय जीवन से मुक्ति दिलाने को बाध्य कर दे। अपनी इस दुर्दशा के लिए मैं स्वयं के भोलेपन को दोष दूँ, पुरुष की छलनामयी प्रवृत्ति को दोष दूँ, अथवा धर्म के नाम पर प्रचलित अमानवीय परंपराओं को दोष दूँ–कारण जो भी हो, झेलना निर्बल को ही पड़ता है।

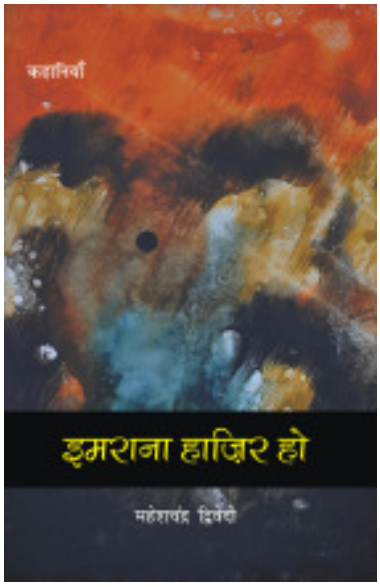

मैं भारत के जम्मू-कश्मीर प्रांत में अखनूर नगर से कुछ दूर चिनाब नदी के किनारे बसे एक छोटे से चिनरू नामक गाँव की रहनेवाली हूँ। मेरे पिता प्रतापचंद्र चिनरू प्राइमरी स्कूल के प्रधानाध्यापक होने के साथ हिंदीभाषा के अच्छे लेखक भी थे। उनकी कहानियाँ और लेख कादंबिनी, सरिता आदि पत्रिकाओं में छपते रहते थे। उनका मेरे गाँव और आसपास के गाँवों में बड़ा सम्मान था। उन्हीं के प्रयत्न से मैंने प्राइवेट पढ़ाई करके गत वर्ष इंटरमीडिएट पास किया था एवं उनकी प्रेरणा से प्रेमचंद्र, शरतचंद्र, अज्ञेय आदि लेखकों की कई पुस्तकों को पढ़ा भी है।

मेरे गाँव में हिंदू और मुसलमान लगभग बराबर संख्या में हैं और सदियों से पारस्परिक भाईचारे और शांति के साथ रहते रहे हैं–एक-दूसरे के शादी-विवाह, तीज-त्योहार और जनम-मरण में बिना भेदभाव सम्मिलित होकर सहयोग करते रहे हैं, परंतु विगत पाँच-छह वर्षों से कुछ संदिग्ध युवकों के चुपचाप गाँव में आने-जाने की ख़बरें यदा-कदा उड़नी प्रारंभ हो गई थीं। फिर आस-पास के गाँवों में अकारण किसी-न-किसी व्यक्ति की हत्या कर दिए जाने की ख़बरें मिलने लगी थीं। इस प्रकार की हत्याएँ सीधे-सादे ग्रामवासियों के मन में आतंक, अनिश्चितता एवं आश्चर्य के भाव उत्पन्न कर रही थीं। धीरे-धीरे लोग समझ गए कि हत्यारे और कोई नहीं वरन् लंबे चोग़े में रायफ़ल छिपाकर रात में ख़ामोश वादियों का सन्नाटा भंग करनेवाले आतंकवादी हैं। इस प्रकार की अकारण हत्याओं को रोकने हेतु मेरे पिता ने गाँव में मीटिंग आयोजित कर एक शांति समिति गठित की। यह समिति अनजान लोगों के गाँव में आगमन और उनको अपने घर पर रखनेवालों पर निगाह रखने लगी। संदिग्ध व्यक्तियों के आगमन की सूचना पर गाँव के लोग इकट्ठे होकर जाते और उन्हें अविलंब गाँव छोड़ने को मजबूर कर देते। एक दिन ऐसे ही कुछ युवक गाँववालों को धमकी देकर गए थे कि वे उन्हें देख लेंगे। आसन्न ख़तरे की आशंका पर मेरे पिता ने पुलिसवालों को उनके आने और धमकी देकर जाने की सूचना दे दी थी। उसके पाँचवें दिन ही जब मेरे पिता स्कूल से पढ़ाकर वापस आ रहे थे, तो रास्ते में गोली मारकर उनकी हत्या कर दी गई थी। उनके मृत शरीर के निकट काग़ज़ की एक पुर्जी मिली थी, जिस पर लिखा था, 'पाकिस्तान ज़िंदाबाद! हमारे रास्ते में रोड़े अटकाने वाले काफ़िरों का यही हश्र होगा–हिज़बुल-मुजाहिदीन'

पिता के मृत शरीर को देखकर मेरे हृदय में उठे वेदना के ज्वार का अनुभव वह पुत्री ही कर सकती है, जो अपने पिता की इकलौती लाड़ली संतान रही हो। पर उस वेदना को मैं पूर्ण रूप से आत्मसात् कर पाती, उसके पहले ही मेरी माँ मूर्च्छित होकर धड़ाम से गिर पड़ी थीं और अपने को किसी प्रकार नियंत्रित कर मुझे माँ को सँभालना पड़ा था। दूसरे दिन मेरी माँ की मूर्च्छा तब टूटी थी, जब पुलिसवाले मेरे पिता के शरीर को कपड़े में बाँधकर पोस्टमार्टम हेतु लेकर चलने वाले थे। तब मुझे अपने पिता के सदैव के लिए हमसे बिछड़ जाने का पूर्ण

आभास हुआ था और मेरे नेत्रों में बस गए अश्रु धाराप्रवाह बहने लगे थे।

हम कुछ दिन तक शोक के सागर में डूबे रहे, परंतु लगता है कि प्रकृति ने प्राणियों को ऐसी जिजीविषा दी है कि गहरे-से-गहरा दुख झेलकर भी वे शीघ्र प्रकृतिस्थ होने लगते हैं और जीवन की गाड़ी यथावत् चल निकलती है। मैं और मेरी माँ भी धीरे-धीरे पुनः गाँव के ढुलमुल चलनेवाले जीवन की सुनिश्चित राह पर वापस आ गए। पिता की मृत्यु के एक वर्ष की अवधि के पश्चात् माँ की प्रमुख चिंता मेरा विवाह हो गई। दिन में दो-चार बार वह मेरे विवाह का प्रसंग छेड़ देतीं। मेरा मन, जो मेरी किशोरावस्था के आगमन से ही पुरुष के साहचर्य के सपनों में रमने लगा था, इन बातों से उद्वेलित हो जाता और मैं मन-ही-मन किसी अनजान राजकुमार से अकस्मात् मिलन की प्रतीक्षा करने लगती।

गत अक्टूबर के महीने में उस दिन गुनगुनी धूप निकली हुई थी, जिसके स्पर्श से बदन में हौले-हौले ऊष्मा के प्रवेश का आभास होता था। मैं माँ के साथ चिनाब नदी के एक एकांत किनारे पर नहाने गई हुई थी। यहाँ झाड़ियों के एक झुरमुट की आड़ में गाँव की स्त्रियाँ हमेशा समस्त कपड़े उतारकर नहाती आई हैं। उसी प्रकार मैं और मेरी माँ भी वहीं नहाईं। स्नान के उपरांत हम दोनों गाँव को वापस चल दिए, तो रास्ते में एक झुरमुट की ओट से अकस्मात् सामने आकर एक जवान, जो भारतीय जवानों की फ़ौजी वेषभूषा में था, माँ से रास्ता पूछने लगा। वह प्रश्न तो माँ से कर रहा था, परंतु उसकी तिरछी निगाह मुझे ही घूर रही थी। उसके होठों पर एक ऐसी व्यंग्यमिश्रित स्मित रेखा थी, जिससे मुझे आभास हो रहा था कि जैसे उसके समक्ष अभी-अभी मेरा कोई रहस्य उजागर हुआ हो। तभी मेरी स्त्रियोचित बुद्धि में यह बात आई कि हो न हो, वह मुझे वस्त्रहीन अवस्था में स्नान करते देख रहा था और मेरी निगाह लज्जावश नत हो गई। जब मेरी निगाह उठी तो वह मुझे ही निहारते हुए दूसरी दिशा में जा रहा था।

यद्यपि लुक-छिपकर हमें नंगे नहाते देखने की धृष्टता पर मुझे उस युवक पर क्रोध आना चाहिए था, परंतु इसके विपरीत देश के सिपाही की वेशभूषा में कंधे पर रायफ़ल लटकाए उस गोरे, चिट्टे, लंबे जवान की छवि बार-बार मेरे मन को गुदगुदाने लगी। उस युवक से पुनर्मिलन की असंभाव्यता पर विचार करके मैं उसकी स्मृति को अपने मन से निकालने का प्रयत्न कर ही रही थी कि दो दिन बाद सायंकाल, जब मैं गाँव के बाहर घास चर रही अपनी गाय को घर वापस ले जाने आयी, तो फिर वह अचानक मेरे सामने आकर मुस्कराता हुआ खड़ा हो गया। उसके इस प्रकार अप्रत्याशित और अकेले में मेरे सामने आ जाने पर मैं घबरा गई, तो मेरी घबराहट को भाँपकर वह कुशल चितेरे की भाँति मिठास-भरे स्वर मैं बोला, 'तुम मधु हो?'

मेरे धीरे से हाँ करने पर उसने कहा, 'तुम्हारा नाम बहुत ख़ूबसूरत है।' और फिर कुछ रुककर पुनः बोला, 'और तुम भी।'

मैं लज्जावश निगाहें नीचे झुकाकर चुपचाप खड़ी रही, परंतु मुझे भान था कि वह अनवरत मेरी ओर देख रहा था, जिससे मेरे बदन में सिहरन-सी हो रही थी। तभी उसने आगे बढ़कर मेरी भौंहों को चूमने का उपक्रम किया। मैं अविलंब प्रकृतिस्थ हो पीछे हट गई और गाय की रस्सी खींचते हुए घर की ओर चल पड़ी। मेरी दशा भाँपकर वह खिलखिलाकर हँस पड़ा और उसकी वह जलतरंग जैसी हँसी मेरे अंतस्तल में समाती चली गई। उसकी हँसी और उसके द्वारा बोले शब्द उस रात मेरे मन को गुदगुदाते रहे।

इसके पश्चात् वह कभी नदी किनारे, कभी खेत में, तो कभी वन में मुझसे एकांत में मिलने लगा और मैं भी उससे मिलन की बेसब्री से प्रतीक्षा करने लगी। जब उस चतुर चितेरे ने मुझे पूर्णतः अपने मोहपाश में बाँध लिया, तो एक दिन मेरी प्यारजनित परवशता के क्षणों में मुझसे बोला, 'मधु! अब मैं तुम्हारे बिना एक पल भी नहीं रह सकता हूँ। मैं तुमसे शादी करना चाहता हूँ। तुमने पूछा तो नहीं, पर मैं तुम्हें बता देना चाहता हूँ कि मैं तुम्हारी जाति का नही हूँ। क्या तुम्हारी माँ जाति के बाहर शादी को राज़ी होंगी?'

मैं जानती थी कि मेरी माँ ऐसे विवाह की बात सोच भी नहीं सकती हैं। अतः मेरे 'न' कहने पर वह अपने स्वर में अतिरिक्त मिठास घोलकर बोला, 'रानी, तब तो एक ही रास्ता है कि तुम मेरे साथ पंजाब मेरे घर भाग चलो और हम दोनों वहाँ शादी कर लें। मैंने अपने घरवालों से इसकी रज़ामंदी ले ली है। शादी हो जाने पर तुम्हारी माँ भी मान जाएँगी।'

मैं उसकी बात सुनकर दुविधाग्रस्त थी कि वह पुनः बोल पड़ा, 'मधु! मैं कल शाम 7 बजे नदी के किनारे उसी झुरमुट के पास तुम्हारा इंतज़ार करूँगा, जहाँ हमारी पहली मुलाक़ात हुई थी।'

फिर मुझे एक फ़्लाइंग किस देते हुए मेरे उत्तर

की प्रतीक्षा किए बिना वह चलता बना।

उस रात मैं एक पल भी सो नहीं पाई। एक ओर ईशान (उसने अपना नाम ईशान और रहने का स्थान पंजाब बताया था) का अदम्य आकर्षण और दूसरी ओर माँ का ख़्याल–मैं दोनों के बीच तपती रही। परंतु प्रथम प्रेम का आकर्षण अधिक भारी पड़ा–मेरे मन ने समझौता कर लिया कि आज नहीं तो कल माँ से अलग तो होना ही है, फिर अभी अलग हो जाने से कौनसा बड़ा फ़र्क़ पड़ेगा? शादी के कुछ दिन बाद माँ का आशीर्वाद लेने चले आएँगे–तब माँ हमें अवश्य स्वीकार कर लेगी। .... और फिर ईशान के बिना जिया भी तो नहीं जा सकता है।

दूसरा दिन बड़ी ऊहापोह में कटा। माँ ने मेरा चेहरा देखकर एक बार पूछा भी, 'मधु, क्या तबियत ठीक नहीं है?' पर मैं किसी प्रकार का उत्तर दिए बिना बात को टाल गई। जैसे-जैसे सूरज ढलने लगा, मेरी उद्विग्नता बढ़ती गई, परंतु शाम को मैं उसके आने से कुछ पहले ही नदी किनारे पहुँच गई। उसने आते ही मेरा हाथ थाम लिया और उसे मज़बूती से पकड़कर मुझे सितारों के पार की अनजान डगर पर ले चला। रात के अँधेरे में कुछ दूर चलकर हमें ईशान की तरह फ़ौजी वर्दी में कुछ और जवान मिले, जिन्हें ईशान ने अपना दोस्त बताया। उनके साथ कुछ घंटे चलकर हम एक गाँव के एक निर्जन मकान में गए। हमने वहाँ खाना खाया और कुछ देर आराम करने के बाद फिर सब लोग चल दिए। थकान के मारे मेरा बुरा हाल हो रहा था और मेरे पैर जवाब दे रहे थे, परंतु ईशान का साथ और उसकी प्यारी-प्यारी बातें मुझमें बार-बार चलते रहने का उत्साह भर देती थीं। उसने बताया था कि सुबह से पहले वे सुरक्षित स्थान पर पहुँच जाएँगे, जहाँ से उन्हें पंजाब के लिए बस मिल जाएगी। सुबह होते-होते हम एक क़स्बे के निकट पहुँच चुके थे। उस क़स्बे में घुसने से पहले ही ईशान ने अपनी फ़ौजी वर्दी उतारकर साथियों को दे दी और एक पठान सूट पहन लिया। उसके साथी उसकी वर्दी लेकर वापस हो लिए। चलते समय जब उन्होंने 'भाभीजान, ख़ुदा हाफ़िज़' कहा, तो मुझे बड़ा अजीब-सा लगा। पर ईशान ने मुझे पहले ही समझा रखा था कि मैं भागकर आने का राज़ खुल जाने से बचने के लिए जहाँ तक संभव हो चुप ही रहूँ, इसलिए मैंने अपनी जिज्ञासा को दबाए रखा और इस विषय में कोई सवाल नहीं किया।

बस स्टैंड पर सब-कुछ उर्दू में लिखा था, जो मेरे लिए अपठनीय था। वहाँ एक बस चलने को तैयार खड़ी थी और हमारे बैठने के कुछ मिनट बाद ही चल दी।

मुझे बस में बैठी सवारियों की वेशभूषा और बातचीत सब-कुछ असहज लग रहे थे, परंतु मैं भयवश कुछ बोल नहीं रही थी। बस जब एक नगर में जाकर रुकी और ईशान उतरने का उपक्रम करने लगा, तब मैंने ईशान से धीरे से पूछा, 'हम कहाँ आ गए हैं?'

ईशान ने धृष्टतापूर्ण मुस्कराहट के साथ उत्तर दिया, 'सियालकोट।' मैंने घबराकर पूछा, 'पर यह तो हिंदुस्तान में नहीं है?' ईशान ने उसी मुस्कराहट के साथ उत्तर दिया, 'पंजाब में तो है।'

मेरे काटो तो ख़ून नहीं। मैं इतनी हतप्रभ और किंकर्तव्यविमूढ़ हो गई कि ईशान द्वारा रिक्शे में बैठने को कहने पर चुपचाप उसके साथ बैठ गई। एक पुराने से घर के सामने पहुँचकर ईशान ने साँकल खटकाई। मुँह में पान दबाए सलवार-कुर्ता में उभरी हुई तोंद दिखाते हुए एक मोटी-सी औरत दरवाज़ा खोलकर हक्की-बक्की-सी हमारे सामने खड़ी हो गई।

'आदाब अम्मीजान', ईशान ने मेरा हाथ पकड़कर दरवाज़े के अंदर घुसते हुए कहा। मेरे मन में अपनी वर्तमान स्थिति के विषय में जो संदेहरूपी घन उमड़ रहे थे, वे इस संबोधन से और गहन होने लगे और घबराहट से मेरा चेहरा विवर्ण हो गया।

उसकी अम्मी ने ईशान को कोई उत्तर देने के बजाय मुझे संदिग्ध निगाहों से घूरते हुए प्रतिप्रश्न किया, 'यह कौन है?'

'मधु।' ईशान ने भेदभरी निगाह से देखते हुए कहा, 'मधु कौन? क्या हिंदू है?' उसकी अम्मी ने मेरी उपस्थिति को नकारते हुए खड़ा प्रश्न किया।

ईशान का अवज्ञापूर्ण उत्तर था, 'हाँ, हिंदुस्तान से लाया हूँ।'

'क्यों?'

'शादी करूँगा।'

'तौबा, तौबा। हिंदू से?'

'नहीं, मुसलमान बनाऊँगा।' ईशान ने यह कहते समय मेरी ओर देखना भी आवश्यक नहीं समझा।

तब ईशान की अम्मी मेरी ओर घूरते हुए ईशान से बोलीं, 'और तबस्सुम का क्या होगा? वह तो सारे घर को उठाकर सर पर रख लेगी।'

फिर ईशान की अम्मी के चेहरे पर भय की एक छाया प्रकट हुई और वह पुनः बोल पड़ीं, 'तुमने यह भी सोचा है कि किसी ने पुलिस को ख़बर कर दी तो क्या

होगा–आजकल हिंदुस्तानी जासूसों की घुसपैठ के शक़ पर पुलिस बड़ी सख़्ती कर रही है।'

इस पर ईशान कुछ सोचकर बोला, 'मैं आज ही निकाह कर लूँगा। फिर पुलिस मेरी बीबी से कुछ नहीं कह पाएगी।'

यह कहकर वह मेरा हाथ पकड़कर घसीटता-सा अंदर ले चला। उसकी अम्मी भी पीछे-पीछे आने लगीं। ठीक उसी तरह घसीटे जाने का आभास होने पर जिस तरह मैं अपनी गाय को घसीटा करती थी, मेरे अंदर प्रतिरोध करने का साहस उदय हुआ। मैंने ईशान की ओर देखकर दृढ़ता से कहा, 'मैं मुसलमान नहीं बनूँगी।'

ईशान ने मुझे घूरकर ऐसे देखा जैसे मैंने उसको गंदी गाली दे दी हो। वह घसीटकर मुझे एक कमरे में ले गया और मुझको वहाँ छोड़कर बाहर से साँकल लगा दी।

इस बीच एक नवजवान औरत, जो तबस्सुम थी, दूसरे कमरे से निकलकर आँगन में आ गई थी और परिस्थिति को समझने का प्रयत्न कर रही थी। वह ईशान से पूछने लगी, 'यह किसको कमरे में बंद कर दिया है?'

'तुम्हारी सौत को।' ईशान ने अधिकारपूर्ण स्वर में उत्तर दिया और माँ से यह कहकर घर के बाहर चला गया 'निकाह की तैयारी करो, मैं अभी काज़ी को बुलाकर लाता हूँ।'

तब तबस्सुम ने आँगन में रोना-पीटना प्रारंभ कर दिया और मैंने कमरे के अंदर से दरवाज़ा भड़भड़ाना प्रारंभ कर दिया। संभवत: किसी पड़ोसिन ने हंगामा होता हुआ सुनकर छत पर आकर ईशान की माँ से पूछा कि क्या बात है। ईशान की माँ ने असल बात छिपाते हुए किसी तरह उसे समझा-बुझाकर वापस तो कर दिया, लेकिन वह बहुत डर गई। घबराकर उसने मेरे दरवाज़े की साँकल खोल दी और मुझे पीछे का दरवाज़ा दिखाते हुए कहा, 'भाग जा कलमुँही।'

मैं वहाँ से ऐसे भागी जैसे शिकारी के दौड़ाने पर ख़रगोश भागता है। पर्याप्त दूर पहुँचकर जब मैं कुछ सँभली, तो मुझे उस अनजान देश में पुलिस ही ऐसी समझ में आई, जो ईशान से मेरी रक्षा कर मुझे अपने देश वापस भेज सकती थी। मैंने थाने का रास्ता पूछा और हाँफते हुए कोतवाली पहुँच गई। वहाँ कोतवाल के सामने मुझे प्रस्तुत किया गया, जिसने कुटिल दृष्टि से मुझे घूरते हुए मेरी कहानी सुनी और व्यंग्यपूर्ण स्वर मैं बोला, 'हिंदुस्तानी जासूस है?'

मेरे यह कहने पर कि मैं सच बोल रही हूँ, उसने कहा, 'तेरी जैसी सैकड़ों को मैं रोज़ चराता हूँ और तू मुझे चरा रही है।'

उसने मेरे विरुद्ध बिना वीज़ा पाकिस्तान आने और मुजाहिदीन को चकमा देकर जासूसी करने का इल्ज़ाम लगाकर मुझे जेल भेज दिया।

जेल में प्रथम दिन के अनुभवों का वर्णन कर मैं इस कहानी को बढ़ाना नहीं चाहती हूँ। संक्षेप में हुआ यह कि मेरे जेल-जीवन के दूसरे दिन ही मुझे जेलर साहब के घर पर काम करने हेतु जाने का आदेश मिला। जेलर साहब का घर जेल-परिसर में ही था और मुझे दिन में उनके यहाँ काम करने के बाद शाम को जेल में वापस आ जाने को कहा गया था। यद्यपि इस आदेश से मेरे मन में अनेक शंकाएँ उठीं, तथापि जेल में हुए प्रथम अनुभवों के कारण एक प्रकार की सांत्वना का अनुभव भी हुआ। मैं दिन के ग्यारह बजे जेलर साहब के घर पहुँची थी। उस समय वहाँ केवल उनकी पत्नी उपस्थित थीं, जिन्हें मुझे वहाँ लानेवाले व्यक्ति ने बेग़म साहब कहकर संबोधित किया था। वह व्यक्ति मुझे बेग़म साहिब को सुपुर्द कर वापस चला गया था। बेग़म साहिब साढ़े पाँच फुट की लंबी-चौड़ी काठी की अधेड़ महिला थीं– उनके चेहरे पर मर्दाना रुआब परिलक्षित हो रहा था।

बेगम साहिब ने पहले मुझे घर का झाड़ू-पोंछा करने को कहा। काम पूरा होने पर वह बोलीं, 'अब खाना बनाना है, लेकिन तुम तो बड़ी गंदी हो रही हो। ग़ुसलखाने में जाकर नहा लो। तब तक मैं तुम्हारे नाप के साफ़ कपड़े ढूँढती हूँ। नहा चुको तो ग़ुसलखाने के दरवाज़े पर दस्तक दे देना, मैं तुम्हें साफ़ कपड़े पहिनने को दे दूँगी।'

मैं सचमुच मैली हो रही थी, क्योंकि सुबह से जेल के दो ग़ुसलख़ानों में नहाने वालों की इतनी लंबी लाइन लग रही थी कि मेरा नंबर ही नहीं आ पाया था। बेगम साहिब का उनके बँगले के ग़ुसलख़ाने में नहाने का आदेश सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ और प्रसन्नता भी। बदन को रगड़-रगड़कर नहाने के बाद मैंने कपड़े माँगने हेतु दरवाज़ा खटखटाया और उनकी आहट पाकर जैसे ही सिटकनी खोली, वह दरवाज़ा ठेलकर अंदर आ गईं। मैं लज्जा से लाल हो रही थी, पर वह मुझे घूरे जा रही थीं और मेरी सद्य:स्नात नग्न देह को देखकर उनकी आँखों में ऐसी चमक आ रही थी, जैसी नागिन द्वारा चूहे का शिकार करते समय उसकी आँखों में आती होगी। उन्होंने बड़ी सरलता से मुझे अपने दोनों हाथों में उठा लिया और अपने बैडरूम में ले जाकर पलंग पर लिटा दिया। फिर

वह अपने वस्त्र उतारने लगी। अभी तक मैं उनकी निगाहों की चमक से मंत्रमुग्ध-सी थी, परंतु उनके द्वारा वस्त्र उतारने से हुए व्यवधान के दौरान मेरी संज्ञा वापस आ गई और मैं उठकर भागने का प्रयत्न करने लगी। परंतु बेग़म साहिब मेरी उस प्रतिक्रिया के लिए पहले से सजग थीं, और उन्होंने पुनः मुझे दबोचकर पलंग पर लिटा दिया और उत्तेजित हो मेरे बदन को निर्बाध चूमने, चाटने और काटने लगीं। अपनी दशा की दयनीयता एवं प्रतिरोध की अक्षमता का विचार कर मैंने निर्विकार होकर उन्हें अपनी मनमानी करने दी—बस चुपचाप अश्रु बरसाती रही। संतृप्त होने के पश्चात् बेग़म साहिब ने स्वच्छ वस्त्र पहिनने को मुझे दिए और मुझसे खाना बनवाया। स्वयं भरपेट भोजन करने के बाद बेग़म साहिब ने मुझे भी खाने को दिया, जो भूखे होने के बावजूद मुझसे खाया न गया।

शाम को मैं मन और शरीर दोनों की थकान से चूर होकर जेल की बैरक वापस आई और फ़र्श पर बिछी पुरानी दरी पर सोने ही जा रही थी कि मेरे बगल में लेटी क़ैदी महिला ने मुझे कनखियों से देखकर फुसफुसाते हुए कहा, 'कहो, जेलर साहब के यहाँ क्या हुआ?'

उत्तर देने में मेरी घबराहट देखकर वह स्वतः बोली, 'कोई बात नहीं। मैं सब जानती हूँ कि क्या हुआ होगा। असल में वह साला जेलर अपनी रातें जेल में आने वाले नमकीन लौंडों के साथ बिताता है और उसकी बेग़म अपने दिन चटपटी लौंडियों के साथ बिताती है।'

उसकी बात सुनकर मेरे मुँह से कोई शब्द नहीं निकला, परंतु मेरी आँखों से फिर अविरल अश्रुधारा बह निकली। वह मेरे उन आँसुओं को तब तक सहानुभूति के भाव से देखती रही, जब तक मैं सो नहीं गई।

दूसरे दिन फिर मुझे बेग़म साहब के घर बुलाया गया और यह सिलसिला रोज़-रोज़ का हो गया है। बैरक में मेरे बगल में लेटनेवाली वह महिला क़ैदी रोज़ रात मेरे पिटे चेहरे और लुटे बदन को देखकर मुझ पर तरस खाने लगी है। उसी ने एक रात मुझसे धीरे से कहा, 'तुम्हें छुड़ानेवाला यहाँ पाकिस्तान में तो कोई है नहीं, तुम चाहो तो हिंदुस्तान में अपने किसी सगे के नाम चिट्ठी लिखकर मुझे दे सकती हो। मैंने एक वार्डन को फाँस रखा है, वह मेरे कहने पर उसमें टिकट लगाकर उसे डाक-बक्से में डाल देगा। अलबत्ता टिकट की कीमत के अलावा उसे पाँच रुपए देने होंगे।'

मैंने एक पत्र अपनी माँ के नाम और एक पत्र भारत के प्रधानमंत्री के नाम लिखा। किसी-किसी दिन विशिष्ट संतुष्टि के होने पर बेग़म साहब मुझे टिप दे देती थीं। मैंने वे पैसे जमा कर रखे थे। उन पैसों को देकर मैंने पत्र भिजवा दिए थे। पता नहीं वे पत्र उन्हें मिले या नहीं, पर मेरी रिहाई की कार्यवाही आज छह महीना बीतने पर भी नहीं हुई है। अतः अब मैं यह पत्र अपने पिता के एक लेखक मित्र को इस अनुरोध के साथ भेज रही हूँ कि इसे किसी महत्त्वपूर्ण पत्र-पत्रिका के संपादक को प्रकाशन के अनुरोध के साथ भेज दें। हो सकता है कि इसके प्रकाशित होने पर मेरी व्यथा-कथा की ओर भारत के राजनेताओं का ध्यान आकृष्ट हो और मुझे इस त्रासदी से उबारने हेतु शासन कुछ प्रयत्न करे।

अन्यथा आत्महत्या के अतिरिक्त मुझे कोई विकल्प सुझाई नहीं दे रहा है। अभागिनी,

'मधु'

महेशचंद्र द्विवेदी

जनपद इटावा (उ॰प्र॰) के ग्राम मानीकोठी में जन्म; लखनऊ विश्वविद्यालय से एम॰एस-सी॰ (भौतिकी) में सर्वाधिक अंक प्राप्त कर गोल्ड मेडिल प्राप्त किया; 1961-62 में आई॰टी॰ कॉलिज, लखनऊ में अध्यापन-कार्य; 1963 में डिफेंस रिसर्च एंड डेवलपमेंट आर्गनाइजेशन में साइंटिस्ट एवं उसी वर्ष आई॰पी॰एस॰ में चयन; सेवाकाल के दौरान लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स, लंदन से एम॰एस-सी॰ (सोशल प्लानिंग); कृतियाँ : उर्मि, मानिला की योगिनी (उपन्यास), एक बौना मानव, सत्यबोध (कहानी-संग्रह), क्लियर फंडा, भज्जी का जूता, प्रिय-अप्रिय प्रशासनिक प्रसंग (व्यंग्य), सर्जना के स्वर, अनजाने आकाश में (कविता-संग्रह); हिंदी एवं अँग्रेज़ी की प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में वैचारिक लेख, कहानियाँ, कविताएँ प्रकाशित, आकाशवाणी एवं बी॰बी॰सी॰ से कहानियाँ प्रसारित;
पता : 1/137 विवेकखंड, गोमती नगर, लखनऊ (उ॰प्र॰); दूरभाष : 0522-2304276

वो प्यारे दिन

वो भी क्या दिन थे
जब हम
उलझनों बिन थे
कल्पनाओं के जहाज़ उड़ाते थे
जब जी हुआ उठे
जब मन हुआ सो जाते थे।

पुन्ना के संग
होती थी ताश की बाज़ी
कभी वो रूठता
कभी मैं होती राज़ी,
गुड़िया की शादी का
प्यारा-सा खेल
ढूँढ़ना उसके लिए
अच्छा-सा मेल,
कोको दी के संग मिलकर
खाना बनाना
थोड़ा समेटना, ज़्यादा गिराना,
नमक के गिरने पर कहना-
'ए दीदी सुन ना,
पुनर्जन्म में पड़ेगा
पलकों से चुनना'
ऐसी कुछ बातों पर
करना अंदाज़ा
कि आख़िर ये पुनर्जन्म है क्या?
आएगा चार दिन बाद
या शायद
जब आएगा मार्च का महीना
या हो सकता है
अगली गर्मियों की छुट्टियों तक
ये 'पुनर्जन्म'
हो ही ना!

कैसे प्यारे-दिन थे
बेफ़िक्र-से पल-छिन थे

अच्छी बातों को यूँ
सीखना चुपचाप
'झूठ बोलना पाप
है घड़े के नीचे साँप!'
फिर अनदेखे साँपों के
डर से घबराना
कह देना सब सच-सच
और अगले ही दिन
माँ की नज़र से बच-बच
दादाजी से लेना
दस पैसे
और न जाने कैसे-कैसे
ठेले वाली कुलफ़ी
खाना जैसे-तैसे छिपाकर
नहीं तो
'ये अच्छी नहीं होती'
कहकर मम्मी फिंकवा देंगी
आँख दिखाकर।

छोटी बहन के लिए
लिखी थी जो लोरी
रात को गाकर उसको सुनाना
उसके रुई जैसे गालों को
सुनहरे बालों को
धीरे-धीरे सहलाते हुए गाना
'प्यारी-प्यारी निंदिया रानी
धीरे-धीरे आना
संग में अपने ठंडी-ठंडी
हवा का झोंका लाना'
नन्ही-सी रुनझुन का
दीदी की लोरी को सुनकर
सो जाना
या फिर सो जाने का
करना बहाना...
और सुबह उठकर
छोटी-सी बात पर
हो जाना ग़ुस्सा
बात बढ़ने पर हो जाना गुत्थम-गुत्था
और मम्मी का कहना-
'तुम दोनों को समझाना
मेरी ही नादानी होगी,
ऐसा करो
डंडे ले आओ,
लड़ने में आसानी होगी।'

सच में
कितने मस्ती-भरे दिन थे
जब हम
हर उलझन बिन थे।

पापा के संग मिलकर
तुकबंदी करना
छोटी-सी, प्यारी-सी
कविताएँ गढ़ना
मम्मी के आँचल में
छिपकर सो जाना
मुट्ठी की रेवड़ियाँ
लालच से खाना,
ऐसी ही न जाने
कितनी हैं बातें
खुद से जब होती थीं
रोज़ मुलाक़ातें...
वो भी क्या दिन थे...
और ये भी क्या दिन हैं

जब ज़िम्मेदारियाँ
हर ओर गिन-गिन हैं,
अब तो समझौतों से
नाता है घनघोर
समझा लेते हैं ख़ुद को
हर रात, हर भोर
क्योंकि
बचपन की बस एक बात
मान ली है हमने–
'मिला-मिला साथी
बेमिला चोर!'

मान भी जा छुटकी

छुटकी!
कितना मुश्किल है
तेरी आँखों को बहलाना,
तेरे मन को सहलाना
तेरी यादों में बसे हैं
कुछ अनजाने पल
जो कल
बस अनजाने ही चले आए थे
उन पलों से
तेरा रिश्ता अब तक
टूट नहीं पाया है
उन यादों ने तुझे
कितनी बार रुलाया है,
ये तो ठीक से याद नहीं
पर इतना ज़रूर याद है
कि तू छोटी मैं बड़ी थी
मम्मी-पापा के बीच की तू
वो नन्ही-सी कड़ी थी,
जो थी सबसे मज़बूत
पर जिसने ख़ुद को छिपाया
अपने गुणों को अंदर-ही-अंदर जिया
अपनी पीड़ा को
मन में ही छिपा लिया
या शायद मैं ज़्यादा व्यस्त थी
अपनी दिनचर्या में मस्त थी
तेरी बात सुन नहीं पाई
लेकिन छुटकी!
यही है सच्चाई
कि तू मेरे जीवन का
सबसे अनमोल हिस्सा है
हाँ, ये क़िस्सा है
कुछ अजीब-सा
कि तुझे ये बात समझा पाऊँ
इसका समय
जाने क्यूँ कम मिला।

तो सुन मेरी बात
आज रात
जब फिर देखा
तेरी आँखों में
भावों को छलकते हुए
तो मन के तूफ़ान में
शब्द खो-से गए
और मैं कह पाई
बस इतना ही
मन-ही-मन,
कि हम दोनों हैं सुमन
उस एक ही डाली के
उस एक धरती
एक ही माली के
जिसने
पूरे पौधे को सींचा
अपने स्नेह से
पूरे जतन, पूरे नेह से
दिए हम दोनों को रंग
संग-संग
संस्कारों के, आदर के
इच्छाओं के पाँव
और क्षमताओं की चादर के
जीवन के उतार के
जीवन के चढ़ाव के
नफ़रत की हार के
प्यार के बढ़ाव के
साथ-साथ सिखाया उन्होंने
समान व्यवहार का पाठ
हमें बताया कि
चार और चार दिखें या नहीं
होते हैं, सदा ही आठ।

तो छुटकी!
ये चार तेरे थे
और चार ही मेरे थे
फिर क्यों तुझे ये बात सताती है
कि आठ में से चार की जो गिनती
मेरे हिस्से में आती है
वो देखी गई थी पहले
गौर से
और फिर कभी प्यार से
कभी शोर से
कहा गया तुझसे
कि सीख कर मुझसे
तू भी रखे
अपने हिस्से के चार
मेरी चार की गिनती के ऊपर
ये भूलकर
कि तेरे चार हो सकते हैं अलग
ज़्यादा सुंदर...

तो ओ मेरी छुटकी!
ये समुंदर रोक लेना
चाहे तो मेरी बात सुन
चाहे तो टोक लेना
पर इस गागर को
उलट जाने दे आज
क्योंकि ये साज़
आज वह कहेगा
जो उसके भीतर की झंकार है
तू मेरी ज़िंदगी का
वो ख़ूबसूरत उपहार है
जिस पर
सहनशीलता का सुंदर-सा
काग़ज़ चढ़ा है
और अंदर के डिब्बे में

प्यार-ही-प्यार है
स्नेह का समुंदर है
हाँ छुटकी, तेरे अंदर है
जो छलका देते हैं कभी-कभी
तेरे ये नैना
और तेरी ये बहना भी
भरी है भीतर तक,
ये जानती है
कि चार तेरे हैं
और चार हैं इसके
फिर भी ये चार-चार अलग हैं
हमारे ख़ास हैं
दोनों में अपनी एक
अलग-सी मिठास है।

मेरी छुटकी! निकाल दे
इस बोझ को मन से
क्योंकि बचपन से ही
चार बराबर चार है
और इनकी
तुलना करना ही बेकार है
क्योंकि
'स्नेह' कहें या 'प्रेम'
अर्थ तो वही–
प्यार है!

तो छुटकी!
हो जाए प्यार भरी चुटकी!
खिलने दे होठों पर मुस्कान
अब मान भी जा ना छुटकी!

सवाल : साहित्य के

डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल

प्रकाशक :
हिंदी साहित्य निकेतन
बिजनौर (उ॰प्र॰)

मूल्य : दो सौ रुपए

जन्म : 23 अक्टूबर, 1971
शिक्षा : स्नातकोत्तर (भौतिकशास्त्र), आई॰ आई॰ टी॰ रुड़की; इंटीरियर डिज़ाइनिंग डिप्लोमा, बैंगलौर
पुस्तकें: चुनमुन की कहानियाँ, जैसी हूँ मैं अच्छी हूँ, नाना-नानी की कहानियाँ, दादा-दादी की कहानियाँ, बर्फ़ का गोला, भूल गए शैतानी, किसान की बेटी, वाह! बढ़िया है, बत्तख का कुरूप बच्चा, गुलाब का फूल, उपहार, हाँ या ना, स्वर्ग में अमीर-ग़रीब, काठ की बछिया (बालकहानियाँ), यादों की गुल्लक (संपादन), बातूनी कहानियाँ (प्रकाश्य)
विशेष : 'आकाशवाणी' के युवा-मंच से गायिका के रूप में कई वर्षों तक प्रस्तुतियाँ, बालकथा लेखन के अतिरिक्त स्वतंत्र चित्रकार एवं मूर्तिकार के रूप में कार्यरत; चित्रों एवं मूर्तियों की अनेक एकल प्रदर्शनियों का देश की विभिन्न आर्ट गैलरियों में आयोजन; देश की विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में चित्रकला और मूर्तिकला के विषय में लेख प्रकाशित; अपने संस्थान मैजिक क्रिएशंस के माध्यम से बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए कार्यरत।
पुरस्कार : रतन शर्मा बालसाहित्य पुरस्कार; राजस्थान साहित्य अकादमी पुरस्कार; भाउराव देवरस युवा साहित्यकार सम्मान, लखनऊ, (उ॰प्र॰); सीतादेवी श्रीवास्तव स्मृति बालसाहित्य सम्मान, जयपुर (राज॰); श्री अंबिकाप्रसाद दिव्य रजत अलंकरण, सागर (म॰प्र॰); द संडे इंडियन द्वारा चयनित विश्व की 111 महिला लेखिकाओं में सम्मिलित।
संप्रति : निदेशक, मैजिक क्रिएशंस; स्वतंत्र लेखिका, चित्रकार एवं मूर्तिकार
संपर्क : ए-801, पार्क व्यू सिटी-2, सोहना रोड, गुड़गाँव (हरियाणा)
मो॰ 09582845000
E-Mail : geetika23@gmail.com
Website : www.magicreationsbygeetika.com

कमरा नंबर 103

सुधा ओम ढींगरा

बार्नज अस्पताल के कमरा नंबर 103 में प्रवेश करते ही, नर्सें टैरी और ऐमी पिंजरे से छूटे पक्षियों-सी चहचहाने लगती हैं और यह कमरा उन्हें खुले आकाश-सा लगता है, जहाँ वे अपनी बातों की ऊँची उड़ान भर सकती हैं। दोनों जानती हैं, बिस्तर पर पड़ी मिसेज वर्मा चिरनिद्रा में हैं और वे निस्संकोच अस्पताल की राजनीति, प्रबंधकों की बेईमानी, जो उन्होंने ईमानदारी के आँचल से ढकी हुई है, के क़िस्से, एक-दूसरे के साथ साझा कर सकती हैं। किस रोगी के टैस्ट बार-बार करवाकर, हैल्थ इंश्योरैंस का पैसा, अस्पताल को दिलवाया जा रहा है, कौनसा रोगी स्टाफ़ की लापरवाही का शिकार हो रहा है, किस मरीज की ओर अधिक ध्यान दिया जा रहा है...., और फलाँ डॉक्टर के फलाँ नर्स के साथ संबंध हैं, की बातें करके, अपने मन की भड़ास निकाल कर वे काम का तनाव भी कम कर लेती हैं। उनकी बातें कमान से निकले तीर-सी किसी को घायल नहीं करतीं, सीधे कमरे की चारदीवारी से टकराकर, सुरक्षित उनके पास लौट आती हैं।

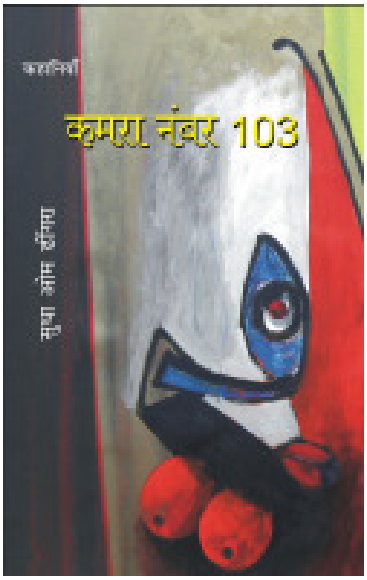

मिसेज वर्मा बेहोश हो गई थीं। उसके बाद होश में नहीं आईं। उनका हृदय, लीवर, किडनी और निकास-मार्ग सब अंग काम कर रहे हैं, पर वे आँखें नहीं खोल पातीं। किसी बात पर कोई प्रतिक्रिया नहीं देतीं। हाथ-पाँव शिथिल व निष्क्रिय हो गए हैं। ख़ून और दिमाग़ के सभी टेस्ट हो चुके हैं, निश्चित रूप से डॉक्टर किसी भी निर्णय पर नहीं पहुँच पाए हैं... मस्तिष्क का वह हिस्सा, जो इन इंद्रियों को संदेश देने की क्षमता रखता है, मृतप्राय नहीं है। देखने-सुनने की शक्ति से वंचित वे नहीं हो सकतीं, क्योंकि इन इंद्रियों से जुड़ा दिमाग़ का हिस्सा भी ठीक है। ऐसा लगता है, किन्हीं कारणों से इंद्रियों का मस्तिष्क से तालमेल टूट गया है। डॉक्टर उन कारणों को समझने की कोशिश कर रहे हैं, जो उनकी पकड़ में नहीं आ रहे, इसीलिए वे संभ्रमित हैं। उन्हें ऐसा महसूस होने लगा है कि मिसेज वर्मा के भीतर जीने की इच्छा, जीवनसंघर्ष व अपनों की ठोकरें चुरा ले गई हैं। वे जीना ही नहीं चाहतीं और वही संदेश शरीर को मिल रहा है ....।

अपनों ने जीवित रहने की उनकी चाह को वापिस लाने के लिए कुछ किया भी नहीं। उनके पास आकर नहीं बैठे .. उनका हाथ पकड़कर बातचीत नहीं की, उन्हें कभी कोई संगीत नहीं सुनाया...इस तरह के मरीजों के लिए यह बहुत लाभदायक और प्रभावकारी होता है। अस्पताल में उन्हें एडमिट करवाने उनका बेटा और बहू आए थे... उनकी गंभीर अवस्था को देखते हुए, उन्हें आईसीयू में रखा गया था। बेटे और बहू को एक दो बार आईसीयू के बाहर लॉबी में बैठे देखा गया। ज्योंही उन्हें आईसीयू से कमरा नंबर 103 में स्थानांतर किया गया, उस दिन से आज तक, उनके बेटे और बहू की किसी ने सूरत नहीं देखी। वे उन्हें घर के फ़ालतू सामान की तरह अस्पताल छोड़ गए और अब डॉक्टर भी उन्हें वहाँ से किसी नर्सिंग होम में भेजने की सोच रहे हैं। अमेरिका में नर्सिंग होम ऐसे रोगियों की शरणस्थली हैं, जिन्हें लंबे उपचार और अपनी दिनचर्या के लिए सहायक की आवश्कता होती है और परिवार के सदस्य जिनकी देख-रेख करना नहीं चाहते या किसी कारणवश कर नहीं सकते। नर्सिंग होम भेजने के लिए बेटे ने बहुत जल्दी स्वीकृति दे दी। अस्पताल जीवन-मृत्यु से खेल रहे रोगियों के लिए है, हालाँकि मिसेज वर्मा के शारीरिक लक्षण गंभीर होते हुए भी, उनकी चिरनिद्रा की स्थिति भयावह नहीं है।

प्रतिदिन के वार्तालाप का केंद्रबिंदु अस्पताल और नर्सें आज उनकी बातचीत से गौण हो गया है। टैरी और ऐमी के दिमाग़ में आज कमरा नंबर 107 घूम रहा है, थोड़ी देर पहले ही उस कमरे में पड़े रोगी रॉबर्ट की साँसों के तार टूटे हैं।

मिसेज वर्मा के पास आकर टैरी उन्हें देखते हुए बोली, 'ऐमी इन्हें नर्सिंग होम भेज दिया जाएगा ..?'

'हाँ, डॉक्टर भी क्या करें...टेस्ट कुछ कह रहे हैं और शरीर उनके प्रतिकूल प्रतिक्रिया दे रहा है...?'

'पता नहीं, ये ऐसे कितने दिन ज़िंदा रह पाती हैं। कमरा नंबर 107 वाला रॉबर्ट तो जल्दी चला गया।'

'वह गहरे कोमा में था, उसके मस्तिष्क का अधिकतर भाग मृतप्राय था। इनके टैस्ट तो कोमा नहीं दिखा रहे, पर शारीरिक लक्षण अर्ध कोमा बता रहे हैं, ऐसे में मस्तिष्क और इंद्रियों को उत्तेजित करने की ज़रूरत होती है...?'

'सही कह रही हो, कुछ साल पहले 210 नंबर के कमरे में एक ऐसा ही रोगी था। उसे लिखने का शौक़ था। उसके परिवार का कोई एक सदस्य, रोज़ कुछ घंटों के लिए, उसके पास बैठकर पुस्तकें पढ़ा करता था। क़िताबों की किन बातों ने उसे उद्दीप्त कर दिया। उसके शरीर में संचेतना का संचार होना शुरू हो गया।'

'कमरा नंबर 107 वाले रॉबर्ट का शरीर बहुत भारी था और उसकी सफ़ाई करते समय हमारी काफ़ी ऊर्जा और समय लगता था।' मिसेज वर्मा का स्पंज बाथ करने से पहले की तैयारी करते हुए ऐमी ने कहा।

'हाँ, मिसेज वर्मा तो बहुत हल्की हैं, बिल्कुल फूल-जैसी। अच्छा तुम ग्लूकोस की शीशी और स्टैंड को थोड़ा परे करो।'

दोनों ने मिलकर उन्हें दाईं तरफ़ मोड़ा। कमलेश वर्मा के गाउन को खोलते हुए धीमे स्वर में उनकी बातचीत आरंभ हो गई।

'साऊथ एशियंस अपने बजुर्गों को बुढ़ापे में अपने देश क्यों नहीं भेज देते। यह देश उन्हें अपना नहीं लग सकता?'

'लगेगा कैसे? वे यहाँ पैदा नहीं हुए। पीढ़ी-दर-पीढ़ी उनकी यहाँ कोई पहचान नहीं। जड़ें उनकी अपने देश में हैं। अधेड़ उम्र में वे बच्चों के पास रहने आते हैं। धड़ यहाँ रहता है और आत्मा वहीं उनके अपने देश में...?'

'टैरी, यहाँ आने से पहले मैं एक नर्सिंग होम में काम करती थी। वहाँ एक वृद्ध भारतीय महिला मिसिज भसीन थीं। उनका ऑस्टियोप्रोसिस काफ़ी बिगड़ गया था। चलने-फिरने, उठने-बैठने की समस्या थी। उनका बेटा समृद्ध था, घर में एक नर्स का इंतज़ाम कर सकता था, पर वह उन्हें वहाँ छोड़ गया। मिसिज भसीन को भाषा की समस्या थी। थोड़ी बहुत अँग्रेज़ी वे समझती थीं। शुद्ध शाकाहारी थीं और गिना-चुना भोजन ही वे पचा पाती थीं। अपने गॉड की पूजा करना चाहती थीं। नर्सिंग होम में वे कर नहीं सकती थीं...धूप और जोत जलाना वहाँ मना था, बस हर समय रोती रहती थीं कि गॉड उन्हें उठा ले।'

'पुअर लेडी, गॉड ब्लैस हर.....।'

'मैंने उसके बेटे से कहा था, अगर अपनी माँ का भला चाहता है, तो उन्हें भारत भेज दो।'

'क्या कहा उसने ..?' टैरी ने मिसिज वर्मा की पीठ और टाँगों पर छोटे से तौलिये पर साबुन लगाकर घुमाते हुए कहा।

कहने लगा, 'मैडम, मेरे अलावा मेरी माँ की देख-भाल करनेवाला कोई नहीं है। किसके पास छोड़ूँ वहाँ..?' मुँह बनाते हुए और उसकी नक़ल उतारते उसने कहा।

'उस समय दिल करता था, उसे कहूँ कि यहाँ कौनसा तुम अपनी माँ का ध्यान रख रहे हो, अपनी माँ को हमारे हवाले ही तो किया हुआ है।'

'ऐसे लोगों को कहना चाहिए, भारत में किसी भी वृद्ध आश्रम में छोड़ देता, अपने लोगों में रहतीं, अपनी भाषा बोलतीं, अपनी पसंद का भोजन खातीं। सहायता तो भारत में बहुत मिल जाती है, सबसे बढ़कर अपने गॉड की पूजा कर पातीं।'

'नहीं कह पाई टैरी, मुझे उस समय नौकरी की बहुत ज़रूरत थी। डर गई, अगर चीफ़ को रिपोर्ट कर देता, तो नौकरी चली जाती। पर मैंने उसकी माँ का ध्यान बहुत रखा।'

'कैसी हैं अब वे ...?'

'पागल हो गई हैं, यहाँ आने के बाद मैंने पता किया।'

'ऐमी, मुझे इस उम्र में अगर किसी अजनबी देश, अनजान लोगों में, जहाँ भाषा, रहन-सहन, खान-पान मेरे स्वभाव और इच्छानुसार न हो, रहना पड़े तो मैं भी पागल हो जाऊँ।'

ऐमी और टैरी की बातें मिसेज वर्मा को कहीं दूर से आती और गूँजती सुनाई दे रही हैं, जैसे कोई कुएँ से बोल रहा है ...? पागल शब्द कानों के पर्दों के साथ ज़ोर से टकराया और मिसेज वर्मा का अवचेतन सचेत हुआ।

'मैं पागल ही हो गई थी।' भीतर भावों का ज्वार-भाटा उठा और अभिव्यक्ति के लिए, निष्क्रिय हो गए शरीर के तट से टकराकर लौट गया।

मिसेज वर्मा को बाईं तरफ़ मोड़ा गया और ऐमी ने गुनगुने पानी में नर्म-नर्म तौलिया भिगोकर उनके बदन को साफ़ करना शुरू किया।

'टैरी, कई भारतीय अपने माँ-बाप को बच्चों की देख-रेख के लिए यहाँ बुलाते हैं। डे केयर और बेबी सिटर का पैसा बचाते हैं।'

'तुम्हें कैसे पता...?'

'गुरप्रीत, मोना, जेबा, दामिनी सब नर्सें ख़ुश होकर बताती हैं...?'

'क्या...?'

'यही कि उन्होंने अपने माँ-बाप को बुलाया है। उनके आने से डे केयर और बेबी सिटर का पैसा बचता है और घर का सारा काम भी वे करते हैं। एक पंथ दो काज हो जाते हैं। माँ-बाप बच्चों से मिल लेते हैं, उनकी सहायता कर देते हैं और अमेरिका भी घूम लेते हैं।'

'अच्छा है, अपने पोते-पोतियों से खेल लेते हैं और दादा-दादी बच्चों में जो संस्कार डाल सकते हैं, वह काम कोई और नहीं कर सकता।'

'माँ-बाप को बुलाने के लिए उनकी यह सोच होती, तो मेरी बातचीत का विषय कुछ और होता।'

'तुमने उनकी बातों से क्या महसूस किया..?'

'स्वार्थ और कमीनापन..?'

'कैसे?'

मिसिज वर्मा शायद वर्षों से बहुत कुछ कहना चाहती थीं। किसी को कुछ कह नहीं पाईं और अपने संवेगों को अपने में ही छुपाती रहीं, अंदर-ही-अंदर घुटती रहीं। स्वार्थ और कमीनापन शब्दों ने उन्हें फिर तरंगित कर दिया। विचारों और सोचों का रेला आया और उथल-पुथल मचाने लगा। वर्षों से रोका हुआ आवेश लावा बन फूटने की स्थिति में आ गया, शिराओं में रक्त-संचार बढ़ा, पर शरीर की शिथिलता ने उसे भीतर ही पिघला दिया...।

'मुझे मेरे बेटे का स्वार्थ और बहू का कमीनापन बहुत दिनों बाद पता चला।' उनके स्नायुओं में हलचल हुई।

उन्हें सीधे बैड पर लिटाते हुए टैरी बोली, 'इनके शरीर में कंपन-सा होता महसूस हुआ।'

'हाँ, मुझे भी लगा।'

'नहीं, नहीं, यह हम लोगों का भ्रम है। पतले-दुबले हड्डियों के ढाँचे को कपड़े बदलते हुए शायद हमें ऐसा लगा है।'

अवचेतना की सचेतता से प्रेरित सुप्त चेतना में संचेतन हुआ, 'अरे! मैं ऐसी नहीं थी...?'

मिसिज वर्मा का आंतरिक चिंतन और संवेग उनकी चेतना से उलझ रहे थे। मनन शुरू हो गया–'मैं स्कूल में पढ़ानेवाली अध्यापिका थी। अच्छे खुले बदन की थी। यहाँ आकर हड्डियों का ढाँचा हो गई। पति कॉलेज में प्राध्यापक थे। अंकुर, हमारे बेटे को, हमने बड़े प्यार और दुलार से पढ़ाया था। आईआईटी में प्रथम आया था। जब उसने अमेरिका आने का फ़ैसला किया तो हमने ख़ुशी-ख़ुशी उसे भेजा। यहाँ की एक भारतीय मूल की लड़की से उसे प्यार हो गया। उसके प्रेम को हमने स्वीकार किया। दो बार हम पति-पत्नी अमेरिका आए, पर बहू का स्वभाव कभी समझ नहीं पाए।'

'उसके लिए हम अंकुर के माँ-बाप हैं। हमारे प्रति वह अपना कोई उत्तरदायित्व नहीं समझती। हमारा ख़याल रखना अंकुर की ज़िम्मेदारी है। वह अमेरिकन कल्चर में जन्मी-पली अमेरिकंज से भी चार क़दम आगे की सोच रखने वाली लड़की है। घर की क़िश्त, रसोई-भंडार की सामग्री, घर का छोटा-मोटा सामान, बिजली-पानी का बिल, सबका भुगतान दोनों आधा-आधा पैसा डालकर करते हैं। वह अपने माँ-बाप की बहुत केयर करती है, पर हमारा बेटा अपना फ़र्ज़ नहीं निभा पाया।'

'बेटे के प्यार में अंधी थी। यही सोचती रही, बेटा बहुत समझदार है, सब ठीक कर लेगा। आठ साल तक दोनों के बच्चा नहीं हुआ। अंकुर के पिताजी पोते-पोती की इच्छा लिए इस संसार से चले गए। निमोनिया हुआ था उन्हें, बिगड़ गया और वे संसार के झंझटों से मुक्त हो गए। उनकी अंत्येष्टि पर बस अंकुर आया था, बहू नहीं।'

वे अतीत के तल से धीरे-धीरे गहरे उतर रही हैं। मस्तिष्क में हलचल हो रही है।

'टैरी, तुम इन्हें सँभालो। मैं बिस्तर की चादर पहले दाईं तरफ़ की बदलती हूँ, फिर बाईं तरफ़ की।'

'ऐमी तुमने बताया नहीं, तुम्हें कुछ साउथ एशियंस के स्वार्थ और कमीनगी का कैसे आभास हुआ?'

'तुम्हें शायद मैंने कभी बताया नहीं, कुछ वर्ष मैंने सिटी अस्पताल में काम किया था। वहीं जान पाई थी, कई भारतीय और पाकिस्तानी अपने माँ-बाप को यहाँ बुला लेते हैं, पर हैल्थ इंश्योयरेंस नहीं लेते। सब अच्छा कमाते हैं, पर दाँतों से पैसा बचाते हैं। माँ-बाप में से अगर कोई बीमार पड़ जाता है, तो उन्हें सिटी अस्पताल में बाहर से ही छोड़ जाते हैं, दवा-दारू का बिल, उनके नाम पर न पड़ जाए, इसके डर से वे उन्हें अस्पताल के अंदर छोड़ने नहीं आते। उन्हें इस बात का पूरा ज्ञान है कि सिटी अस्पताल में जो रोगी प्रवेश कर गया, उसका उपचार करने से कोई डॉक्टर इंकार नहीं कर सकता। माँ-बाप की चिकित्सा मुफ़्त में करवाना चाहते हैं और बीमार

सुधा ओम ढींगरा

जन्म–जालंधर, पंजाब।
संपादक–हिंदी-चेतना (कैनेडा एवं अमेरिका की सर्वाधिक लोकप्रिय अंतरराष्ट्रीय त्रैमासिक पत्रिका); विधाएँ–कविता, कहानी, उपन्यास, इंटरव्यू, लेख एवं रिपोर्ताज़। कृतियाँ–कौनसी ज़मीन अपनी, वसूली (कहानी-संग्रह); धूप से रूठी चाँदनी, तलाश पहचान की, सफर यादों का (काव्य-संग्रह); संपादन-मेरा दावा है (काव्य-संग्रह अमेरिका के कवियों का संपादन); परिक्रमा (पंजाबी से अनुवादित हिंदी उपन्यास); माँ ने कहा था (काव्य सी॰डी॰); 22 संग्रहों में कविताएँ, कहानियाँ प्रकाशित; संदली बूआ (पंजाबी में संस्मरण), टारनेडो (कहानी-संग्रह पंजाबी में अनुदित), कई कृतियाँ पंजाबी और अँग्रेज़ी में अनुदित; विशेष–भारत एवं अंतरजाल की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में कहानियाँ, कविताएँ व लेख निरंतर प्रकाशित होते रहते हैं; अंतरराष्ट्रीय हिंदी समिति (यू.एस.ए) के कविसम्मेलनों की राष्ट्रीय संयोजक; हिंदी विकास मंडल (नार्थ कैरोलाइना) की निर्देशक; उत्पीड़ित नारियों की सहायक संस्था 'विभूति' की सलाहकार; इंडिया आर्ट्स ग्रुप की स्थापना कर हिंदी के बहुत से नाटकों का मंचन किया; शिडोरी प्रोडक्शन की संस्थापक एवं निर्देशक; इससे शो करके शिक्षा, कला और साहित्य के लिए धन एकत्रित किया जाता है; अनगिनत कविसम्मेलनों का सफल संयोजन एवं संचालन किया है; रेडियो सबरंग (डेनमार्क) की संयोजक, टी.वी., रेडियो एवं रंगमंच की प्रतिष्ठित कलाकार। सम्मान–कौनसी ज़मीन अपनी कहानी-संग्रह को पंद्रहवाँ अंबिकाप्रसाद दिव्य पुरस्कार; द संडे इंडियन द्वारा विश्व की 111 हिंदी महिला लेखिकाओं पर प्रकाशित अंक में अमेरिका की छह लेखिकाओं में से एक; कथाबिंब पत्रिका में प्रकाशित कहानी 'फंदा क्यों?' पाठकों के अभिमतों के आधार पर वर्ष 2010 की श्रेष्ठ कहानी और कमलेश्वर स्मृति कथा-पुरस्कार 2010 द्वारा पुरस्कृत; 'मोरिंस्विल्ल नाओ' पत्रिका ने अपने Spotlight Section (2008) में उपलब्धियों पर इंटरव्यू प्रकाशित किया; चतुर्थ प्रवासी हिंदी उत्सव 2006 में अक्षरम् प्रवासी मीडिया सम्मान; हैरिटेज सोसाइटी नार्थ कैरोलाईना (अमेरिका) द्वारा सर्वोत्तम कवयित्री 2006 से सम्मानित; ट्राइएंगल इंडियन कम्युनिटी, नार्थ-कैरोलाईना (अमेरिका) द्वारा 2003 में नागरिक अभिनंदन; हिंदी विकास मंडल, नार्थ-कैरोलाईना, हिंदू-सोसाइटी नार्थ कैरोलाईना एवं अंतर्राष्ट्रीय हिंदी समिति (अमेरिका) द्वारा हिंदी के प्रचार-प्रसार एवं सामाजिक कार्यों के लिए कई बार सम्मानित; अमेरिका में हिंदी के प्रचार-प्रसार एवं सामाजिक कार्यों के लिए वाशिंगटन डी.सी. में तत्कालीन राजदूत श्री नरेशचंदर द्वारा सम्मानित।

101 Guymon Court, Morrisville, NC 27560 USA
sudhadrishti@gmail-com; Phone: 919-678-9056 (H), 919-801-0672 (Mobile)

माँ-बाप, भाषा और खाने-पीने की परेशानी सहते पड़े रहते हैं वहाँ। बेचारे, किन कष्टों और पीड़ा से गुज़रते हैं, किसी को बता भी नहीं सकते। इन लोगों के घर देखो तो कितने बड़े-बड़े हैं और दिल इतने छोटे।' वह भावुक हो गई।

'माँ-बाप इतना शोषण सहते क्यों हैं?'

'यह भी तो हो सकता है, वे उसे शोषण नहीं, बच्चों के प्रति अपना कर्त्तव्य समझते हों, साउथ एशियंस का कल्चर और सोच हम लोगों से भिन्न है।'

ऐसा व्यवहार तो अमानवीय है, कोई कल्चर इसे प्रोत्साहित नहीं करता।'

इस वार्तालाप से मिसेज वर्मा बीते पलों के समंदर से भावनाओं के सैलाब के साथ उभरीं।

'टैरी-ऐमी, माँ-बाप ममता में लुट-पिट जाते हैं। मैं भी तो बेटे के प्यार में बिस्तर पर आ गई। पति की मौत के बाद मैं भारत में अकेली ज़रूर हो गई थी, पर अपनों में थी। तुम ठीक कहती हो, यह देश बड़े-बूढ़ों के लिए है ही

नहीं। बहू गर्भवती हो गई, तो बेटा मुझे लेने आ गया। उसने भावुक कर दिया। पोते-पोती का चेहरा देखने की अभिलाषा में मस्तिष्क से सोचना बंद कर दिया और मैं दिल से सोचने लगी। बेटे के घर की स्थितियाँ भूल गई और उसके मोहपाश में बँधी उसकी हर बात स्वीकारती गई। उसने यह कहकर घर बिकवा दिया कि अब आप मेरे पास रहेंगी, इसका सारा पैसा आपके नाम करवा दूँगा। वहाँ आप किसी की मोहताज नहीं होंगी। पोते-पोती के साथ ख़ुशी से रहिए, सपना आपकी बहू भी आपको कुछ कह नहीं पाएगी। बैंक में जमा पूँजी की चैक बुक लेकर मैं बेटे के साथ अमेरिका आ गई।'

'इनके बाल भी बना दें।' टैरी ने उनके बालों में कंघी फेरते कहा।

कमलेश वर्मा अपने आंतरिक संसार में सोचों के कई पहाड़ लाँघती गईं–'कुछ ही दिनों में सच्चाई सामने आ गई। बहू का गर्भ गिर गया और मैं उन पर बोझ बन गई, मैं बच्चे की देख-रेख के लिए लाई गई थी, मेरा अब वहाँ क्या काम था, पर मैं कहाँ जाती? घर बेच आई थी, और उस पैसे से बेटे ने अपने घर की किश्तें चुका दी थीं। स्वाभिमान मारकर बैठी रही। अचानक एक दिन बेटे को नौकरी से जवाब मिल गया। अब मैं उस घर में दीवार पर लगा मकड़ी का जाला थी, जिसे वे उतारकर फेंकना चाहते थे। मैं भारत लौटना चाहती थी, पर बेटे की सूरत रोक लेती।'

एक दिन बेटे ने कहा–'माँ मेरी नौकरी नहीं है। घर की सफ़ाई करनेवाली हटा दी है, कुछ ख़र्चा बच जाएगा। आप घर में ख़ाली बैठे तंग आ जाते हैं, घर के काम-काज क्यों नहीं सँभाल लेते।'

'मैं झाड़ू-पोंछा करने लगी, कपड़े धोती, उन्हें प्रेस करती, खाना बनाती फिर भी पति-पत्नी में झगड़ा होता रहता, उनका झगड़ा क्यों होता, कारण नहीं जान पाई। मेरे सिर में दर्द रहने लगा। रक्तचाप बढ़ गया था, चैक करने के लिए बेटे को नहीं कह पाई?'

'ऐमी, इनके बाल लंबे और रेशमी हैं, चल जूड़ा बनाकर समेट देते हैं।'

'मैं उस दिन जूड़ा ही बना रही थी, जब बेटे ने चैक बुक सामने पटकी और बोला–'माँ सपना ने यह ढूँढी है। आपने हमसे इसे छुपाया हुआ था। मैं पैसे-पैसे के लिए यहाँ मोहताज हूँ और भारत के बैंक में आपके नाम लाखों रुपये पड़े हैं। इस पर हस्ताक्षर कर दीजिए, आपके बाद यह पैसा मुझे ही मिलना है, तो अब क्यों नहीं...!'

'सिर दु:ख रहा था, रक्तचाप पहले से ही अधिक था। बेटे का स्वार्थ हृदय को बींध गया। घबराहट हुई और मैं बेहोश हो गई। थैंक्स टैरी..थैंक्स ऐमी..मैं अब और शोषण नहीं सहूँगी, लौट जाऊँगी अपनों में।'

दोनों अपना काम समाप्त कर बाहर जाने को तैयार थीं।

'टैरी एक बार देख लें, सब-कुछ ठीक है। पाउडर डाला है या नहीं?'

'हाँ देख लो, कई बार हम भूल जाती हैं।

ऐमी मिसेज वर्मा को देखते ही एकदम बोली–'टैरी जल्दी से डॉक्टर को बुलाओ, जल्दी। इनकी आँखें खुली हैं। कोरों से पानी बह रहा है।'

शोध
दिशा
के

आजीवन सदस्य बनिए
और पाइए हिंदी साहित्य निकेतन से
प्रकाशित पुस्तकें आधे मूल्य में।

शोध-दिशा के पाठकों के लिए एक विशेष योजना

शोध-दिशा का आजीवन सदस्यता-शुल्क
1500 रुपए है।

हिंदी साहित्य निकेतन की पुस्तकों की सूची पत्रिका के अंत में प्रकाशित की गई है।

कृपया पत्रिका के लिए अपना बैंक ड्राफ़्ट **'शोध-दिशा'** के नाम प्रेषित करें।

पुस्तकों के लिए अपना बैंक ड्राफ़्ट **'हिंदी साहित्य निकेतन'** के नाम से भेजें।

हिन्दी साहित्य निकेतन

16 **साहित्य विहार, बिजनौर (उ॰प्र॰)**

फोन : 01342-263232, 09412712789

कुत्तेवाले पापा

डॉ॰ मीना अग्रवाल

'क्यों स्मिता! इस कर्मों मारी कुंती माँ पर क्या भूत-सवार हुआ कि कुत्तेवाले पापा जैसे बुढ्ढे-खूसट से इश्क़ कर बैठी, इस बुढ़ापे में। रज़िया ने आते ही बातचीत का सिलसिला शुरू कर दिया। रज़िया का स्वभाव ही कुछ ऐसा है कि वह इधर-उधर की बातों में अधिक दिलचस्पी लेती है। कॉलोनी की किस लड़की का इश्क़ किससे चल रहा है, किस युवक ने किस युवती से चक्कर चला रखा है। कौन किसके साथ फ़रार हो गई शहर में.. वह शहर में आए-दिन होने वाली ऐसी घटनाएँ ढूँढ-बटोरकर लाती है और देर तक बैठी उनकी समीक्षा करती रहती है। रज़िया एक नर्स है और अवकाश का समय उसके लिए बतियाने का समय होता है। मेरा घर चूँकि इसके रास्ते में पड़ता है, इसलिए अक्सर यहाँ आ जाती है।

मैंने उसकी बात सुनी तो उत्तर देते हुए बोली, 'तुम इस बात को यों भी तो कह सकती हो रज़िया कि इस सिरफिरे कुत्तेवाले पापा को इस बुढ़ापे में क्या सूझी कि कुंती माँ जैसी बुढ़िया को दिल दे बैठा।'

'हाँ! यूँ भी कहा जा सकता है?' रज़िया एक चंचल मुस्कान अधरों पर लाती हुई बोली, 'नाक को सीधे पकड़ो या हाथ घुमाकर। बात तो एक ही है।'

पिछले एक हफ़्ते से कॉलोनी के लोग इस घटना पर आश्चर्य प्रकट कर रहे थे कि सत्तर साल की बुढ़िया शकुंतला अपना घर-बार छोड़कर माइकिल जौसेफ़ के यहाँ जाकर रहने लगी थी। माइकल जौसेफ़ की उम्र भी पिचहत्तर साल से कम नहीं थी। चूँकि उसने एक नहीं, दो नहीं, पूरे तीन तगड़े मुस्टंडे कुत्ते पाल रखे थे, इसलिए कॉलोनी के लोग उसे कुत्तेवाले पापा के नाम से पुकारने लगे थे। जब भी वह अपने तीनों कुत्तों की ज़ंजीर थामे घर से बाहर निकलता, लोग अचरज से उसकी ओर देखने लगते।

शकुंतला माँ अभी कुछ वर्ष पहले तक नारी निकेतन की प्रबंधिका थीं। उसे अपने सरकारी कर्त्तव्यों से ज़्यादा समाजसेवा के कामों में दिलचस्पी थी। सत्तर साल की उम्र को पहुँच गई थीं। इसलिए कॉलोनी और शहर के सभी परिचित लोग उन्हें कुंती माँ कहकर पुकारने लगे थे। वह अकेली थीं और नि:संतान। जब वह अपने लंबे-चौड़े भवन को छोड़कर कुत्ते वाले पापा के यहाँ चली आईं, तो इस घटना को लेकर लोगों में तरह-तरह की चर्चाएँ होने लगीं? कोई कुछ कहता, कोई कुछ। जितने मुँह, उतनी ही बातें थीं।

मैंने घटना में शामिल दोनों पात्रों की पृष्ठभूमि पर नज़र डालते हुए सोचा-'है वास्तव में अजीब बात?'

तभी रज़िया की आवाज़ मेरे कानों में आई, 'क्यों स्मिता! क्या सत्तर- पिचहत्तर साल की उम्र में भी प्रेम का उफान बाक़ी रह जाता है?' वर-वधू दोनों के बाल बगुलों जैसे सफ़ेद, दोनों के चेहरों पर झुर्रियाँ पड़ी हुईं। न मुँह में दाँत, न पेट में आँत। ऐसे में चले हैं इश्क़ करने। मत मारी गई है क्या दोनों की।'

रज़िया अपनी बात कह चुकी तो मैंने इस चर्चा को हँसी में टालने की चेष्टा करते हुए कहा, 'पुराने ज़माने के लोग जो कह गए हैं रज़िया, इश्क़ न जाने जात-कुजात। अब तुम इसमें एक पंक्ति की वृद्धि और कर लो... अब इस कहावत को समय के अनुसार ढालकर कहो, इश्क़ न जाने जात-कुजात, प्रेम न जाने बूढ़ा गात।'

रज़िया ने यह सुना तो ठट्ठा मारकर हँसी, 'बात तो तुमने सच कही है, स्मिता। यह ज़माना ही बेशर्मी का है? न औरतों की आँख में लाज है, न मर्दों में कोई लिहाज।'

रजिया अभी अपनी बात पूरी भी नहीं कर पाई थी कि मैंने उसे बीच में टोकते हुए कहा, 'पर सुना है कुंती माँ कुत्तेवाले पापा की सेवा तन-मन से कर रही हैं, दिन रात। देवता की तरह पूज रही हैं, उसे। हर काम बैठे-बैठे हो रहा है बड़े मियाँ का। चलो, जवानी में असहनीय दुख झेले थे कुत्ते वाले पापा ने, बुढ़ापे में इसी बहाने कुछ आराम मिला।'

'यह तो तुम ठीक कह रही हो स्मिता। रज़िया मेरे कंधे पर हाथ रखते हुए बोली, 'कुत्ते वाले पापा को तो मुफ़्त में घर-बैठे एक सेविका मिल गई। पर सवाल यह है कि कुंती माँ को इससे क्या मिला। दिनरात जुटी रहती हैं, बूढ़े की सेवा में। न समाज की चिंता, न धर्म का ख़याल। मैंने महसूस किया कि रज़िया विषय को धार्मिक भेदभाव की तरफ़ मोड़ने का प्रयास कर रही है। मैंने टोका–'मानव-सेवा के लिए किसी धर्म के साथ बँधे रहने की ज़रूरत नहीं होती है रज़िया, और जहाँ तक सवाल प्राप्ति का है, माना कुंती माँ को धन के रूप में कुछ प्राप्त नहीं हुआ है, पर सेवा का आनंद अपने-आपमें भी तो एक प्राप्ति ही है।'

'खाक पड़े ऐसी प्राप्ति पर।' रज़िया खीजकर बोली, 'मौत के कुएँ में पाँव लटकाए बैठे हैं और चले हैं इश्क़ करने? अब कोई संतान तो होने से रही, इस नि:संतान जोड़े के।'

'तुम एकदम ज़्यादती कर रही हो, रज़िया।' मैंने उसके विचारों की दिशा बदलने का प्रयास किया.., 'इश्क़ हमेशा शारीरिक ही नहीं होता, कई बार मानसिक भी होता है।'

मुझे लगा, रज़िया मेरी बात सुनकर अवाक्-सी हो गई है। मैंने उसे गंभीरतापूर्वक समझाते हुए कहा, 'कई बार हम लोग विषय को उसकी पूरी गहराई के साथ नहीं समझ रहे होते हैं, इसलिए तरह-तरह के भ्रमों में पड़ जाते हैं, जबकि वास्तविकता कई बार कुछ और ही होती है।'

रज़िया ने मेरे संकेत पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। बोली, 'वास्तविकता कुछ और नहीं है, स्मिता बहन.. बस इतनी है कि एक सत्तर साल की बुढ़िया अपने से अधिक बुद्ढे व्यक्ति को दिल दे बैठी और उससे अवैध संबंध स्थापित कर लिए।'

'मैं तुम्हारी बात से सहमत नहीं हूँ, रज़िया।' मैंने एक बार फिर उसे समझाने की कोशिश करते हुए कहा–'वैध-अवैध का निर्णय इतनी जल्दी नहीं किया जाता है, उन परिस्थितियों को भी देखा जाता है, जिसमें किसी व्यक्ति ने कोई ऐसा क़दम उठाया, जो हमारी-तुम्हारी राय में उसे नहीं उठाना चाहिए था।'

'तो क्या तुम जानती हो, वे परिस्थितियाँ क्या थीं, जिनमें कुंती माँ ने अपना घर-द्वार छोड़कर कुत्ते वाले पापा का हाथ थामना पसंद किया।' रज़िया ने मुझसे पूछा।

'मैं ज़्यादा नहीं जानती, पर कल पिंटू के दादा कुत्ते वाले पापा की चर्चा करते हुए कह रहे थे।' मैंने गोद में सो रहे पिंटू की पीठ सहलाते हुए बताया रज़िया से, 'वे कह रहे थे, माइकल जौसेफ़ की धर्मपत्नी रोज़ी जौसेफ़ एक सड़क दुघर्टना में जवानी ही में मर गई थी। तब उनके तीन संतानें थीं, तीन बेटे, स्टीफ़न, सायमन और क्रिस्टोफ़र...'

'पर स्मिता बहन! ये नाम तो उनके यहाँ पले हुए कुत्तों के हैं।' रज़िया ने मुझे बीच में टोकते हुए आश्चर्य व्यक्त किया।

'हाँ! मैं जानती हूँ, माइकल जौसेफ़ ने यही नाम अपने कुत्तों के भी रखे हैं पर क्यों ... आगे की बात सुनो।' मैंने रज़िया के आश्चर्य को दूर करने का प्रयास किया और अपनी बात आगे बढ़ाई, 'पत्नी की मृत्यु के बाद माइकल जौसेफ़ ने दूसरा विवाह नहीं किया। वह पत्नी की इन तीनों निशानियों को छाती से लगाकर बैठ गए। उन्हें पाला पोसा, पढ़ाया, लिखाया।'

मैंने कुत्तेवाले पापा की कहानी को यहाँ छोड़कर रज़िया से पूछा, 'क्यों बहन, जिस व्यक्ति ने जवानी में बच्चों की ख़ातिर दूसरा विवाह न किया हो, वह अब मौत के निकट आकर ऐसा क्यों करेगा?'

'हाँ, यह बात तो सोचने की है स्मिता?' रज़िया ने अपनी पहली वाली राय के विरुद्ध सचाई प्रकट होते देखी तो जिज्ञासापूर्वक मुझसे पूछा, 'फिर वे तीनों बेटे कहाँ गए माइकल जौसेफ़ के? क्या वे भी मर गए? माइकल जौसेफ़ ने उनके नामों पर अपने कुत्तों का नाम क्यों रखा?'

मैंने महसूस किया, रज़िया के स्वर में एक साथ सब-कुछ जानने की उत्सुकता थी।

मैंने उसे बताया, 'मैं भी इस बारे में बहुत ज़्यादा नहीं जानती हूँ, रज़िया, पर पिंटू के दादा ने जो कुछ बताया था, वही दोहरा रही हूँ। उन्होंने बताया था कि जब माइकल जौसेफ़ की पत्नी का देहांत हुआ तब स्टीफ़न आठ साल का था, सायमन पाँच साल का और क्रिस्टोफ़र तीन साल का था। तुम समझ सकती हो रज़िया, इतनी कम उम्र के बच्चों को पालने-पोसने में कितना कष्ट झेलना पड़ा होगा बूढ़े जौसेफ़ को।

'हाँ तुम ठीक कहती हो स्मिता। पर जौसेफ़ ने उसी समय पुनर्विवाह क्यों नहीं कर लिया था?' एक स्वाभाविक-सा सवाल पूछा रज़िया ने।

उसे यह भय रहा होगा कि स्टैप मदर कहीं इन बच्चों के साथ सौतेला व्यवहार न करे। इनके साथ अन्याय न हो।' जौसेफ़ की इस भावना को समझना मुश्किल नहीं है, रज़िया।'

'लेकिन आम पुरुष तो ऐसा नहीं कर पाते, स्मिता।' रज़िया यह कहते हुए आश्चर्य से भर गई थी।

'हाँ! मैं भी यही समझती हूँ।' मैंने उत्तर देते हुए कहा, 'मैं समझती हूँ जौसेफ़ साधारण पुरुषों जैसा नहीं था। उसने बच्चों के लिए अपनी पूरी जवानी दाँव पर लगा दी।'

मैंने अपनी बात जारी रखी, 'पिंटू के दादा बताते थे कि बच्चों के जवान होने तक जौसेफ़ ने न दिन को दिन समझा, न रात को रात। उसने माता और पिता दोनों का कर्त्तव्य निभाया। उन्हें माँ का प्यार भी दिया और बाप का दुलार भी।'

'पर वे तीनों गए कहाँ?' बूढ़े जौसेफ़ के साथ तो नहीं रह रहे हैं वे।' रज़िया ने यह सब जानने की इच्छा प्रकट की, 'अच्छी नौकरियों पर लग गए। उनमें से एक इन दिनों राँची में है, दूसरा कलकत्ता और तीसरा गोहाटी।

'क्या बूढ़े बाप की कोई भी ख़बर नहीं लेता है उनमें से?' रज़िया ने जिज्ञासा से भरा एक और सवाल मुझसे पूछा।

'पिंटू के दादा बताते थे कि' मैं अपनी धुन में कहती गई, 'तीनों ने बारी-बारी लवमैरेज कीं, अपना-अपना घर बसाया और बूढ़े बाप को यों भूल गए, जैसे उसने कभी उनके साथ कुछ किया ही न था।'

'उफ़! इतना बड़ा त्याग करनेवाले बाप के साथ बेटों का ऐसा बर्ताव।' अनायास रज़िया के मुँह से निकला।

मैंने उसकी बात सुनी और बूढ़े जौसेफ़ की जीवन-कथा को और आगे बढ़ाया, 'तीनों बेटे मुँह मोड़ गए और बूढ़ा जौसेफ़ जब उनकी ओर से बिलकुल निराश हो गया तो उसने हताश होकर तीन कुत्ते पाल लिए।

'आदमी जब मानव-जाति से निराश हो जाता है, तो शायद पशु-पक्षियों की ओर ही आकर्षित होने लगता है वह।' मैंने पिंटू के दादा की ज़ुबानी सुनी गई गाथा को एक क्षण भूलकर जौसेफ़ की घटना पर एक मनोवैज्ञानिक टिप्पणी की।

डॉ॰ मीना अग्रवाल

जन्म : 20 नवंबर 1947, हाथरस (उ॰प्र॰); शिक्षा : एम॰ए॰, पी-एच॰डी॰, संगीत प्रभाकर; कार्यक्षेत्र : पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर हिंदी विभाग, रानी भाग्यवतीदेवी महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बिजनौर (उ॰प्र॰)।

कृतियाँ : अंदर धूप-बाहर धूप (कहानी-संग्रह), जो सच कहे (हाइकु-संग्रह), सफ़र में साथ-साथ (मुक्तक-संग्रह), यादें बोलती हैं (कविता-संग्रह), हिंदी गीतिकाव्य में संगीत; अनेक प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में शोध-निबंधों का नियमित प्रकाशन

सहलेखन : पर्यावरण : दशा और दिशा, नारी : कल और आज, वाद-विवाद प्रतियोगिता, निबंध एवं पत्र-लेखन, हिंदी-व्याकरण एवं रचना;

संपादन : शोध संदर्भ (पाँच खंड), हिंदी-हिंदी-अँग्रेज़ी कोश, हिंदी समांतर कोश, चुने हुए राष्ट्रीय गीत, काका की पाती, सूर साहित्य संदर्भ, तुलसी मानस संदर्भ, हिंदी साहित्यकार संदर्भ कोश (दो भाग); प्रबंध-संपादन : शोध दिशा (त्रैमासिक), संदर्भ अशोक चक्रधर; विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित; आकाशवाणी से कहानियों और वार्ताओं का नियमित प्रसारण। पुरस्कार-सम्मान : रोटरी फाउंडेशन की पॉल हैरिस फैलो एवं मेजर डोनर, विदुषी विद्योत्तमा सम्मान, उज्जैन (म॰प्र॰) (2005); श्री अमनसिंह आत्रेय अखिल भारतीय कृतिकार सम्मान (2006), अक्षरम् हिंदी-सेवा सम्मान (2008); केंद्रीय हिंदी निदेशालय (मानव संसाधन विकास मंत्रालय) का शिक्षा पुरस्कार।

पता : 16 साहित्य विहार, बिजनौर (उ॰प्र॰)

दूरभाष : 01342-263232, 07838090237

ई-मेल : drmeena20@gmail.com

'हाँ! हो सकता है ऐसा हो।' रज़िया ने मुझसे थोड़ी सहमति व्यक्त करते हुए कहा।

'पिंटू के दादा बताते थे–' मैं लौटकर पुनः अपने ससुर के प्रसंग पर आ गई। 'जौसेफ़ ने पता नहीं किस भावना के वशीभूत इन कुत्तों के नाम भी अपने बेटों के नाम पर स्टीफ़न, सायमन और क्रिस्टोफ़र ही रखे। वह अब इनसे भी इतना ही प्यार करता है, जैसा कोई अपनी सगी संतानों से करता होगा।'

'शायद यह सब निराशा में हुई प्रतिक्रिया के कारण किया होगा माइकल जौसेफ़ ने।' रज़िया वास्तविकता को समझते हुए बोली, मैंने अपना बयान जारी रखा। 'पिंटू के दादा बता रहे थे कि माइकल जौसेफ़ अब इन कुत्तों को हर वक़्त अपने साथ रखता है। अपने साथ ही खिलाता-पिलाता है, लंच भी, डिनर भी। कुत्तों से उसे वह प्यार मिल रहा है न, जो पुत्रों से मिलना चाहिए था।'

'मानवता से निराश हो जाने की बहुत ही हृदयविदारक घटना है यह।' रज़िया ने जौसेफ़ के अतीत से परिचित होते हुए कहा।

'हाँ! मैंने उत्तर दिया और जौसेफ़ के संदर्भ को आगे बढ़ाया, 'पिछले दिनों जब जौसेफ़ को टायफ़ाइड हो गया तो उसके पालतू कुत्ते जौसेफ़ की कोई मदद नहीं कर सके। वे न दवा ला सकते थे, न डॉक्टर को बुला सकते थे। तीनों उदास-उदास मन से जौसेफ़ के सिरहाने बैठे रहते, भूखे-प्यासे। वे प्यार तो कर सकते थे अपने स्वामी को, पर बीमारी में नर्सिंग नहीं कर सकते थे उसकी।

बात पूरी नहीं हुई थी कि रज़िया ने बीच में हस्तक्षेप करते हुए कहा–'इसी दयनीय हालत में बूढ़ी माँ कुंती आ गई होंगी बीमार और बूढ़े जौसेफ़ के पास।'

'हाँ! निस्संदेह ऐसा ही हुआ होगा।' मैंने रज़िया की बात का समर्थन किया। तभी द्वार पर आहट हुई। देखा जौसेफ़ के पड़ोस में रहनेवाली कुमकुम धीमी चाल से चली आ रही थी। मैंने उसका स्वागत करते हुए बैठने के लिए कहा।

कुमकुम कुर्सी पर बैठती हुई बोली, 'जौसेफ़ ने स्वस्थ होते ही अपने कुत्तों को बेच दिया। लेकिन उनके नाम वापस ले लिए। अब वह कुंती माँ के साथ खुश हैं।'

मैंने सुना तो अनायास मेरे मुँह से निकला, 'शायद अब मानवता पर उसका विश्वास लौट आया है।' किसी ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। अब हम तीनों किसी और विषय में वार्ता करने लगे थे।

धर्म-कर्म

सूर्यकांत नागर

वे क़स्बे की माध्यमिक शाला में मामूली हैसियत वाले हिंदी-संस्कृत के गुरुजी हैं। सेवानिवृत्ति की राह पर तेज़ी से बढ़ रहे हैं। आज उनकी पत्नी ने जो कुछ कहा, सुनकर स्तब्ध हैं, चकित भी। उन्हें अपने सीमित गुरु-ज्ञान पर शर्म भी महसूस हुई।

हुआ यूँ कि जिस चाल में वे रहते हैं, उसी में नीची जाति का मदन पत्नी के साथ रहता है। अनपढ़, शराबी-कबाबी मदन बीवी को अक्सर पीटता रहता है। गुरुजी की पत्नी इन लोगों से किसी प्रकार का संपर्क रखना तो अलहदा, उनसे बात करना भी पसंद नहीं करती थीं। पूजापाठी होने से छूत-छात का भी ख़ूब ध्यान रखती थीं।

गत रात मदन की बीवी प्रसव-पीड़ा से छटपटा रही थी। पता नहीं, मदन पी-पाकर कहाँ औंधे सोया पड़ा था और पत्नी अकेली बुरी तरह कराह रही थी। गुरु-पत्नी कुछ देर तक सुनती रहीं। फिर लपककर मदन के घर में पहुँच गईं। देर रात तक मदन की बीवी की देखभाल, सेवा-शुश्रूषा करती रहीं। उसके पैर सहलातीं, माथे का पसीना पोछती रहीं और ढाढस बँधाती रहीं। अपने घर से चाय और गर्म पानी लेकर आईं। कोई सुबह चार बजे मदन की पत्नी ने एक प्यारे-से बच्चे को जन्म दिया। उसकी रोने की आवाज़ के साथ ही मदन की पत्नी की पीड़ा समाप्त हुई और उसने संतोष की साँस ली। गुरु-पत्नी ने हाथ जोड़कर आकाश की ओर देखा। दो-तीन घंटे ठहरकर वह लौट आई।

रात-भर से बेचैन गुरुजी ने आश्चर्य व्यक्त किया और पूछा, 'अरे! यह सब! तुम तो उस शराबी-कबाबी से कितनी घृणा करती थीं।'

'मैं शराबी-कबाबी और उसकी जात-पाँत को देखती कि उस औरत को, जो पहली बार माँ बनने जा रही थी। न जाती तो मर जाती बेचारी! गुरुजी, क्या आपको भी बताना पड़ेगा कि हर धर्म में माँ एक-सी होती है और हर माँ का बस एक ही धर्म होता है।'

इस्मत आपा और तीन जवान लड़के

नवलकिशोर शर्मा

साहित्य से मेरा रिश्ता उर्दू के दो महान अफ़साना निगार मंटो व इस्मत चुगताई की कहानियों के हिंदी अनुवाद पढ़कर ही जुड़ा। मेरा जैसा ठेठ देहात में रहने वाला आठवीं कक्षा का एक छात्र जब पहली बार अपने अध्यापक मामा की क़िताबों की आलमारी से चुराकर इस्मत चुगताई की 'प्रतिनिधि कहानियाँ' पढ़ने लगा, इस वक़्त तक यह भी समझ नहीं थी कि साहित्य क्या होता है? पाठ्यक्रम की पुस्तकों के अलावा अन्य कुछ भी पढ़ने की घर में न तो छूट थी और न ही कोई सुविधा। मन करता था कि कुछ अलग पढ़ा जाए और ऐसे में एक बार वेदप्रकाश शर्मा का एक पॉकेट उपन्यास किसी से माँग लाया। रात को लालटेन के उजाले में अभी दस-बारह पन्ने ही पलटे थे कि बड़े भैया द्वारा पकड़ लिया गया। फिर, जमकर धुनाई हुई मेरी भी और कमज़ोर काया के उस बेचारे उपन्यास की भी। मेरे गाल लाल हो गए और उपन्यास का अस्तित्व काग़ज़ों के टुकड़ों में तब्दील हो गया। इस घटना ने मन में यह भाव जगा दिया कि ऐसी क़िताबों में कुछ नया ज़रूर है, जिसे पढ़ने से हमें रोका जा रहा है। ख़ैर! कई दिनों तक कुछ भी पढ़ने की हिम्मत नहीं हुई, पर मामा की आलमारी पर नज़रें अवश्य लगी रहतीं और फिर एक रात उस ख़ज़ाने में से पहली क़िताब चुराने में कामयाब हो गया।

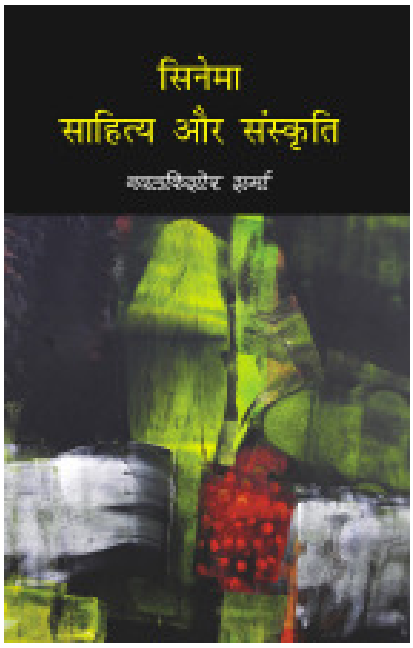

इस बार बेहद सावधानी के साथ इसे पढ़ना शुरू किया। स्कूल के बस्ते में पाठ्यक्रम की पुस्तकों के बीच छिपाकर इसे रखा और सिर्फ़ तीन दिन में पूरी चौदह कहानियाँ पढ़ डालीं। कहानियों के पात्र दिन-रात दिमाग़ चकराते रहते। इस्मत चुगताई की क़लम ने जादू-सा कर दिया। अपने सभी ख़ास-ख़ास सहपाठियों को अधिकांश कहानियाँ मुँहजुबानी सुनाईं। लिहाफ़, छुईमुई, चौथी का जोड़ा और घरवाली, सभी को रसपूर्ण लगीं। लिहाफ़ तो मैंने दो-तीन बार पढ़ी। इस पहली कामयाबी ने इतनी हिम्मत पैदा कर दी कि एक दिन घर के सारे लोग जब एक शादी में खाने पर गए थे, मैं पेट दर्द का बहाना कर घर में ही रह गया और उस दिन मामा की आलमारी की खोजबीन कर डाली, पर इस्मत चुगताई की कोई दूसरी क़िताब वहाँ नहीं मिली। क़िताबों को फिर से आलमारी में ठूँस दिया और फिर कई दिन उदासी में गुज़ारे। विद्यालय के पुस्तकालय में भी इस्मत चुगताई की तलाश बेकार ही रही। लाइब्रेरियन साहब ने तो यह नाम ही पहली बार सुना था।

इस बीच आलमारी से चुरा-चुरा कर तीन-चार क़िताबें और पढ़ीं, जिनमें अज्ञेय द्वारा अनुदित साहित्य अकादमी से प्रकाशित रवींद्रनाथ टैगोर का 'गोरा', प्रेमचंद की कहानियों के संग्रह मानसरोवर के दो भाग आदि याद हैं, पर इस्मत चुगताई वाले स्वाद की तलाश में मन भटकता रहा। सन् 1985 में कॉलेज में अध्ययन के लिए जयपुर आना हुआ। पढ़ाई का ख़र्च निकालने के लिए रात की पारी में नौकरी की तलाश में यहाँ से शुरू हो रहे नवभारत टाइम्स से जुड़ गया। साढ़े सत्रह साल की उम्र में मिले पहले ही वेतन से पेट की भूख के साथ ही साहित्य पूर्ति भी आरंभ हो गई। राजकमल पेपरबैक्स की छोटी-छोटी ब्लैक कवर वाली पुस्तकें, जिनका मूल्य उस वक़्त दस रुपए हुआ करता था, मेरे संग्रह में शामिल होने लगीं। इस दौरान इस्मत चुगताई के साथ ही मंटो को भी पढ़ा। इस्मत चुगताई के उपन्यास टेढ़ी लकीर व जंगली कबूतर भी पढ़े। नवभारत टाइम्स के जयपुर ऑफ़िस में उस वक़्त युवा पत्रकारों की बहुत अच्छी टीम थी, जिन्हें साहित्य, संगीत व सिनेमा से गहरा लगाव था। इस्मत चुगताई के बारे में कई रोचक जानकारियाँ मुझे

वहाँ सुनने को मिलीं। पहली दफ़ा यह पता चला कि लिहाफ़ कहानी के ख़िलाफ़ इस्मत पर लाहौर हाईकोर्ट में केस भी चला था। मंटो के साथ उनकी नज़दीकियों के सच्चे-झूठे क़िस्से भी साथियों ने सुनाए। मंटो के संस्मरणों की एक क़िताब 'मीना बाज़ार' भी मैंने उन्हीं दिनों पढ़ी थी। इस्मत चुगताई ने लखनऊ विश्वविद्यालय से बी॰ए॰ और फिर बी॰एड॰ किया था और पहली नौकरी उन्होंने मेरी जन्मस्थली जोधपुर (राजस्थान) में शहर के बीचों-बीच स्थित राजमहल गर्ल्स स्कूल की प्रिंसिपल (1939-1940) के रूप में की। ज्यों-ज्यों इस्मत आपा के बारे में अधिकाधिक सुनने व पढ़ने को मिलता गया, मेरे जेहन में उनकी एक ख़ास तस्वीर उभरती गई। इसमें शायद ही किसी को एतराज हो कि उर्दू कथासाहित्य में इस्मत चुगताई सरीखा बोल्ड लेखन करनेवाली कोई दूसरी महिला कथाकार पैदा हुई हो। इस्मत ने साहित्य और साहित्य से बाहर हर तरह की रूढ़ परंपरा को नामंजूर किया। जिस दौर और जिस समाज से उनकी क़लम का रिश्ता रहा है, एक महिला कथाकार के नाते उसे अपनी शर्तों पर निबाह ले जाना बेहद मुश्किल काम था। उन्होंने अपने कथासाहित्य के माध्यम से आदमी द्वारा आदमी पर होनेवाले जुल्म और ऐसे आदमी को पैदा करनेवाले निज़ाम की तीखी आलोचना, वह भी पूरी कलात्मकता के साथ की है। यथार्थ की गहरी पकड़, नए अर्थ खोलती अछूती उपमाएँ, बेबाकी भरा व्यंग्यात्मक लहजा, चरित्रों का स्वाभाविक विकास और शब्दों का बेहद किफ़ायती इस्तेमाल उनके रचनाकर्म की ख़ासियत है।

इस्मत और मंटो के कथासाहित्य से शुरू हुआ पढ़ने का लगाव धीरे-धीरे हिंदी साहित्य की क्लासिक्स की ओर मुड़ गया। शरतचंद, प्रेमचंद, हज़ारीप्रसाद द्विवेदी, अज्ञेय, धर्मवीर भारती, जैनेंद्र, यशपाल, बंकिमचंद्र आदि को पढ़ा। फिर नए लेखन में रुचि पैदा हुई। कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, मन्नू भंडारी, राजेंद्र यादव, कृष्णा सोबती, अमरकांत सहित कई प्रतिष्ठित लेखकों की चर्चित कृतियाँ खोजकर पढ़ीं। इसी दौरान 1990 के अप्रैल महीने के प्रथम सप्ताह में एक दिन अख़बार के दफ़्तर में किसी का संदेश मिला कि उर्दू की महान लेखिका इस्मत चुगताई इन दिनों जयपुर में हैं। खोज-पड़ताल करके हम तीन मित्र गांधीनगर में बने राजकीय आवासों में उनके एक दूर के रिश्तेदार के घर पहुँचे। वह पाँच अप्रैल 1990 का दिन था। दरअसल, इस्मत चुगताई को उन्हीं दिनों इक़बाल सम्मान मिला था और वह उसी सिलसिले में मुंबई से मध्यप्रदेश की यात्रा करके लौटते हुए जयपुर ठहरी थीं। पैंसठ साल की इस्मत आपा के ख़ूबसूरत गोरे चेहरे पर झुर्रियों का नामो-निशान तक नहीं, जबकि मेरी कल्पना में उनका चेहरा झुर्रियों से भरा था, सफ़ेद चमकते बाल और सफ़ेद पोशाक उनकी ख़ूबसूरती को ही बढ़ा रहे थे। दरवाज़ा एक बेहद सुंदर लड़की ने खोला था और बड़ी आत्मीयता के साथ हमें इस्मत आपा के पास ले गई। उस वक़्त हम तीनों ही मित्र अविवाहित थे, सो कभी इस्मत आपा को देखते तो कभी उस बालिका को। इस्मत आपा की अनुभवी नज़र ने जल्दी ही हमारी कमज़ोरी को ताड़ लिया और बेबाक अंदाज़ में दरवाज़े पर खड़ी शाज़िया को बुलाकर हमारे पास बिठा लिया। परिचय भी कराया, यह शाज़िया है, एम॰बी॰बी॰एस॰ कर रही है, आख़िरी साल है फिर इसका निकाह करेंगे। इसके मामू का लड़का है बहराइच में, उससे बात चल रही है।' इस अप्रत्याशित हादसे के बाद हमने एक बार भी शाज़िया की तरफ़ निगाह नहीं डाली और आपा से ही गुफ़्तगू करते रहे।

इस्मत आपा ने बताया कि उनके क़िस्सों के ज़्यादातर चरित्र उन्होंने अपने आसपास से ही उठाए हैं, बस उनमें रोचकता पैदा करने के लिए ज़रा-सा कथारस लेकर चासनी में भिगोकर कुछ नया बना दिया। 'लिहाफ़' कहानी की सच्चाई के बारे में जानने को मैं ही सर्वाधिक उत्सुक था। उन्होंने कहा कि स्त्री समलैंगिकता कोई नई चीज़ नहीं थी, उस वक़्त भी, हर समाज में ख़ासकर जहाँ महिलाएँ अधिक बंधन में जीने को मजबूर हैं। ऐसे वाकये सदियों से होते रहे हैं। जब दो पुरुष आपस में यौनतृप्ति के साधन विकसित कर सकते हैं तो भला दो स्त्रियाँ ऐसा क्यों नहीं कर सकतीं? सैक्स पर इस तरह खुलकर बयान और बेबाकी से अपनी बात रखने का इस्मत आपा का अंदाज़ बड़ा आनंदित कर रहा था। मुस्लिम तबके में महिला को घर में क़ैद रखने के सवाल पर इस्मत आपा ने स्पष्ट किया, 'इस्लाम में स्त्री पर किसी प्रकार की ग़ुलामी नहीं है, वहाँ भी महिला को जीने की समूची आज़ादी है। जहाँ तक बंधनों का सवाल है, तो यह काम कुछ कट्टरपंथी मज़हबियों का फैलाया हुआ है और फिर इस्लाम ही नहीं, बल्कि सृष्टि के आरंभ से लेकर आज तक हर मज़हब, हर समाज, हर वर्ग में नारी पर ही तरह-तरह के बंधन लगाए जाते रहे हैं। दरअसल, नारी के प्रति पुरुष की सोच उसे अपनी ज़ागीर समझने से ऊपर आज भी नहीं उठ पाई है। आभूषणों के नाम पर नख से शिख तक स्त्री को बाँधने की साज़िश भी पुरुषवर्ग के इसी अहं का हिस्सा है। स्त्रियों के बारे में पुरुष-समाज

का यह आरोप है कि वे बहुत बोलती हैं, लेकिन हक़ीक़त यह है कि बेचारी स्त्रियाँ अपने सुख के बारे में बहुत कम बोलती रही हैं। उन्हें बोलने दिया ही नहीं गया है। लंबी ख़ामोशी के बाद जब कुछ स्त्रियों ने अपने वजूद के बारे में बोलना शुरू किया तो पुरुष वर्ग में खलबली मच गई। क्या स्त्री को यह आग्रह करने का अधिकार भी आप नहीं देना चाहते कि वह अपने भीतर दबी रचनात्मकता को बाहर निकाल सके। सदियों से पुरुष स्त्रियों को झूठे बहकावे में रखता आ रहा है। उसे एक देह से अधिक अन्य कुछ समझने की कोशिश जानबूझकर नहीं की गई। कॉलेज में पढ़नेवाली मुस्लिम लड़कियों के बारे में उन दिनों एक इस्लामी संगठन द्वारा जारी किए गए ड्रेस कोड के फ़तवे पर उनकी राय जानने के सवाल पर इस्मत आपा ने कहा कि, 'यह कपड़े वगैरह तो हमने अपनी सुरक्षा के लिए बनाए हैं। दरअसल, जब कपड़े नहीं थे तो जंगली जानवर स्त्रियों के स्तन व गुप्तांग आदि पर हमला कर दिया करते थे, इसलिए शुरू में इन्हें वृक्षों की छाल, पत्तों और फिर जानवरों की खाल आदि से छिपाकर रखना शुरू हुआ। आज तो इंसान ख़ुद ही हिंसक जानवर बना बैठा है, जो लाख ढके होने पर भी स्त्रियों के अंगों को नोचने-खरोंचने से ज़रा भी नहीं चूकता। मैं पुरुष के समान स्त्री को हर तरह की आज़ादी के हक़ की पक्षधर हूँ। अब भला यह भी कोई समझदारी है कि आज भी गाँव-देहात में हमारी स्त्रियाँ पुरुष डॉक्टरों को अपने अवयव दिखाने में हिचकती हैं और शल्यक्रिया भी नहीं करने देतीं। यह झूठी शर्म है और इसकी उत्पत्ति विकारमय स्थिति से होती है। जहाँ महिला-चिकित्सक की सुविधा उपलब्ध नहीं है, तो क्या वहाँ की स्त्रियाँ गंभीर रोग के बावजूद पुरुष चिकित्सक से इलाज नहीं कराए और अपनी जान दे दे, यह पुरुष को मंजूर है। क्या हम आज भी पशु ही बना रहना चाहते हैं, जहाँ स्त्री बस एक मादा से अधिक कुछ नहीं है। पता नहीं कब तक पुरुष इसी सोच से घिरा रहेगा। एक स्त्री महज एक स्त्री नहीं, बल्कि संपूर्ण सामाजिक वास्तविकता का एक अविच्छिन्न हिस्सा है। 'जिसके साथ रात गुज़ारी, सुबह उठकर उसे भूल जाओ, पुरुष को इस दायरे से बाहर निकलकर स्त्री की भावना को समझना होगा।'

इस तरह उस दिन इस्मत आपा से ख़ूब लंबी बात हुई और अगले दिन फिर मिलने के वादे के साथ हमने विदा ली। जाते-जाते एक नज़र शाज़िया पर डालने की कोशिश ज़रूर की, पर दरवाज़े तक इस्मत आपा ख़ुद हमें छोड़ने आई थीं, सो हमारी वो हसरत अधूरी रह गई। रात को हमने प्लान बनाया कि क्यों न इस्मत आपा को लंच के लिए अपने यहाँ बुला लिया जाए और इस तरह शाज़िया से भी कुछ बातें करने का मौक़ा मिल जाएगा, पर मुश्किल यह थी कि हम तीनों ही ज़्यादा अच्छा खाना पकाना नहीं जानते थे। फिर भी जोश-जोश में हमने अगले दिन आपा को खाने पर आमंत्रित कर ही लिया। उनका पहला सवाल था, क्या खाना तुम्हारी बीवियाँ पकाएँगी? हमने उन्हें बताया कि अभी तक हमारी शादियाँ ही नहीं हुई हैं और हम ख़ुद ही अपने हाथों से उन्हें खाना बनाकर पेश करेंगे। वे बहुत ख़ुश हुईं और बोलीं, 'अच्छा है, चलो काग़ज़ पर दावत का 'मीनू' लिखो।' मैं तो डर ही गया, पर अब कर क्या सकते थे? आपा ने लिखाया, दही-बड़े, गुलाब-जामुन, अरहर की दाल, जीरा राइस, बैंगन-टमाटर की सब्ज़ी और तवा रोटी। खैर! जान में जान आई, क्योंकि डर था कि कहीं आपा ऐसी कोई चीज़ नहीं लिखा दें, जिसे पकाने में पसीने छूट जाएँ। हालाँकि ज़्यादातर ढाबों-होटलों अथवा मित्रों के यहाँ लंच-डिनर कर समय गुज़ार रहे हम तीनों के लिए यह सब पकाना भी 'बोर्ड परीक्षा' से कम नहीं था।

अगले दिन हम लंच की तैयारी में जुट गए। मुझे हर बार की तरह रसोई का ज़िम्मा सौंपा गया। रवि को ऑफ़िस की स्टॉफ़ कार लेकर आपा को लाने व वापिस छोड़ने का काम और संजीव को बाज़ार से ताज़ा गुलाब-जामुन, बीयर व सिगरेट लाने की ज़िम्मेदारी तय हुई। काम का बँटवारा इतनी आसानी से भी हल नहीं हुआ था कि सब अपने-आप काम से सहमत हों, बल्कि देर रात तक तीनों के बीच अच्छा-ख़ासा वाकयुद्ध चलता रहा था। दरअसल, आपा को लाने-ले जाने की ज़िम्मेदारी में एक अतिरिक्त आकर्षण था 'शाज़िया', इसलिए तीनों ही इस काम पर अपना दावा जता रहे थे, पर आख़िर में जैसे-तैसे मामला बिठा लिया गया। सबसे कठिन काम मेरे ही पास था। मुझे तेल-मसालों का कोई सटीक अंदाज़ नहीं था और फिर चार-पाँच लोगों के लिए इससे पहले शायद ही कभी खाना पकाया हो। एक बड़ी परेशानी थी 'दही-बड़े'। बाज़ार से नहीं लाने की आपा ने पहले ही हिदायत दे दी थी। ख़ैर, इस मुश्किल काम को एक बहुत ही आसान सी रेसिपी द्वारा हमारे एक सिंधी मित्र ने हल कर दिया। पहले 'दही-बड़े' के बारे में ही बात कर लें तो आपको भी खाना और बनाना सहज हो जाएगा। एक पैकिट ताज़ा ब्रेड का मँगाया गया। कुछ आलू उबालकर उनमें बारीक कटे प्याज़, हरी मिर्च, हरा धनिया, काला नमक, भुना हुआ जीरा, अमचूर पाउडर

मिलाकर हाथ से मसलकर 'पेस्ट' बना लिया। फिर दो-दो ब्रैड आपस में मिलाकर एक कटोरी को उल्टा रखकर इन्हें गोलाई में काट लिया। दोनों ब्रेड के बीच 'पेस्ट' रखा और अलग प्यालियों में उसे सजाकर ऊपर से दही का घोल परोस दिया गया। मिर्च, नमक व ज़ीरा ऊपर से डालने के लिए रख दिया गया।

इधर, सुबह से ही मैं किचन में जुट गया। अब इसे अपने मुँह अपनी तारीफ़ करने सरीखी बात समझे पर यह हक़ीक़त है कि जाने कैसे उस दिन मेरा बनाया खाना सबको अच्छा लगा। सब्ज़ी व दाल में अलग से नमक लेने की भी ज़रूरत नहीं पड़ी। पर, आपा ने 'दही- बड़े' का राज़ पहला चम्मच मुँह में डालते ही खोल दिया। जितनी ख़ुशी मुझे खाने की तारीफ़ सुनकर हुई थी, उससे कहीं अधिक इस बात से कि आपा अकेली आई थीं और बेचारा 'रवि' मुँह लटकाए था। सबसे पहले आपा ने एक गिलास 'बियर' का लिया, साथ में सिगरेट और अगल-बगल में तीन कुँआरे जवान। इस्मत आपा ने इस दृश्य पर जो डायलॉग बोला, उसे हम पूरे जीवन नहीं भूल पाएँगे। आपा ने सिगरेट का धुआँ छोड़ते हुए रोमांटिक अंदाज़ में कहा, 'इस वक़्त दुनिया की कोई भी ख़ूबसूरत हसीना मुझसे रस्क करने लगेगी कि देखो एक बुढ़िया तीन-तीन जवाँ 'लौंडों' के साथ घिरी हुई है। हम सबने इस पर ख़ूब ज़ोर का ठहाका लगाया। खाना आपा ने थोड़ा ही खाया, पर तारीफ़ ढेर सारी की।

तो, ऐसी थी इस्मत आपा, जो अपने लेखन में जितनी खरी और बेबाक थीं, ठीक उतनी ही खुली थीं निजी ज़िंदगी में भी। दिनांक 24 अक्टूबर 1991 को अचानक उनके इंतकाल की ख़बर आई। मन व्यथित हुआ, पर अधिक तकलीफ़ हुई इस बात से कि उनके जनाज़े में इप्टा से जुड़े कई लोग और कुछ तो उनके बेहद नज़दीकी व रिश्तेदार कहे जाने वाले तथाकथित आधुनिकतावादियों ने भी शामिल होना ठीक नहीं समझा, जिसकी मुख्य वजह थी आपा की अंतिम इच्छानुसार उन्हें दफ़नाने की जगह उनका दाहकर्म किया जाना। अधिकांश मुस्लिम बुद्धिजीवियों को आपा का यह आख़िरी सफ़र भी इस्लाम के ख़िलाफ़ लगा और उन्होंने जनाज़े का बहिष्कार कर दिया। इस्मत आपा ने ऐसा करके मरते वक़्त भी रूढ़ियों को तोड़ते रहने का अपना सिलसिला जारी रखा। याद आया कि जयपुर में आपा के साथ हुई लंबी बातचीत में उन्होंने ज़िक्र किया था कि चाहे इस्लाम में पुनर्जन्म की मान्यता भले ही नहीं हो, पर मैं चाहती हूँ कि मरने के बाद मेरी देह को पानी में डाल दिया जाए, ताकि मछलियाँ उसे खा जावे और फिर मछलियों को आदमी खा लेगा। इस तरह मैं एक बार फिर इंसान के जिस्म में पहुँच जाऊँगी और एक दिन पुनः मेरा जन्म हो जाएगा। 'जब भी कभी यात्रा के दौरान किसी नदी अथवा झील में मछलियाँ देखता हूँ तो जो भी सफ़ेद चमकती बड़ी-सी आँखों वाली सुंदर मछली दिखाई पड़ जाती है, मुझे इस्मत आपा का ज़ोर का ठहाका लगाती वो तस्वीर याद आ जाती है, जिसमें आपा के एक हाथ में बीयर का गिलास और दूसरे हाथ में सिगरेट थमी हुई है।

नवलकिशोर शर्मा

जन्म : 5 जनवरी , 1967 जोधपुर (राजस्थान)

शिक्षा : बी॰कॉम॰, बी॰जे॰एम॰सी॰, बी॰लिब॰

अनुभव : नवभारत टाइम्स के जयपुर संस्करण में 10 वर्ष (1985-1994)

पत्र-पत्रिकाओं में सिनेमा एवं साहित्य पर नियमित लेखन; बयाँ, आजकल, लमही, गुंजन, अक्षर, शब्द-संसार आदि में कविताओं का प्रकाशन

कृतियाँ : (कविता-संग्रह) आड़ी-तिरछी यादों-सा कुछ (2010), गीले हैं प्रेम के रंग (2010), जब चाँद डूब रहा था (2012); सार्वजनिक पुस्तकालय (2012), फिल्म संगीत : बदलता स्वरूप (2011), हिंदी सिनेमा कल, आज (2011), चेहरों की किताब के कुछ नोट्स (प्रकाशनाधीन)

संप्रति : निदेशालय भाषा एवं पुस्तकालय विभाग में सेवारत।

संपर्क : एफ-7, गांधी नगर, जयपुर 302015 (राजस्थान)

फोन : 0141-2700646 मो॰ 09828277002

ई-मेल : nawaljpr67@gmail.com

सत्ता के गुंडे

डॉ॰ हरीशकुमार सिंह

सत्ता का मतलब होता है ताक़त। सत्ता से आशय देश-प्रदेश में शासन-व्यवस्था की बागडोर सँभालने से भी है। वहीं सत्ता का नशा अद्‌भुत होता है तथा जिसके पास भी सत्ता की पॉवर होती है, वह इसका जायज, नाजायज फ़ायदा उठाता ही है। सत्ता में सत्ता का प्रयोग करनेवाले सत्ताधीश कहलाते हैं। सत्ता में संत तो होते ही हैं, मगर सत्ता के गुंडे भी होते हैं। ये सत्ता के गुंडे हर राजनीतिक दल में रहते हैं। सत्ता के इन गुंडों का वर्चस्व और प्रभाव इनके आकाओं की सत्ता की शक्ति से संचालित होता है।

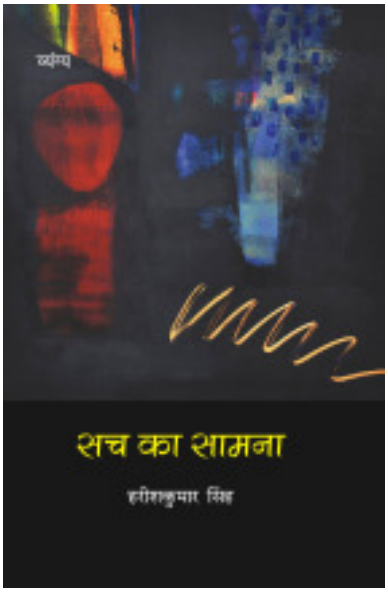

सत्ता के ये गुंडे शासन करनेवाले राजनीतिक दल के छोटे-मोटे मोहल्ले स्तर के नेता से लेकर उच्च स्तर तक के नेता हो सकते हैं। इनका कार्य स्थानीय शासन, प्रशासन में बेवजह दखल देना, अपने क्षेत्र के पुलिस थाने पर सैटिंग करना, नगरनिगम के अधिकारियों पर दबाव बनाकर अपने कार्य करवाना आदि होता है। जब कभी कोई सरकारी कर्मचारी, अधिकारी इनका अनैतिक कार्य नहीं करता है तो ये लातें, घूँसे भी चला देते हैं और अपनी वास्तविक औक़ात पर आ जाते हैं। सत्ता के ये गुंडे सरकारी कार्यालयों में रिश्वतख़ोर अधिकारियों से खुलेआम वसूली करते हैं, तो ईमानदार अधिकारियों से विशेष त्योहारों पर चंदा वगैरह माँगते नज़र आते हैं। गले में सत्ताधारी पट्‌टा डालकर किसी को भी ये चमकाते देखे जा सकते हैं।

ऐसे ही हमारे शहर में सत्ता के एक गुंडे ने अपने रिश्तेदारों के लिए सरकारी गैस्टहाउस नहीं मिलने पर सत्कार अधिकारी से बदसलूकी कर डाली। सत्ता के गुंडे के विरुद्ध समूचे प्रशासन ने एकमत होकर थाने में प्रथम सूचना रिपोर्ट लिखवाई और उसकी गिरफ़्तारी की माँग की। पुलिस आज भी सत्ता के गुंडे को फ़रार बता रही है। उधर शहर में जब प्रदेश के मुख्यमंत्री का आगमन हुआ तो हैलीपैड पर मुख्यमंत्री का स्वागत सत्ता के गुंडे द्वारा करते हुए अख़बारों में फ़ोटो छपा। मगर पुलिस रिकार्ड में वह आज भी फ़रार ही है। ज़ाहिर है कि सत्ता के इन गुंडों को स्थानीय प्रशासन अघोषित मान्यता देता है। ये गुंडे पूरे देश-प्रदेश, शहर, गाँव में होते हैं तथा इनका आतंक प्रशासन के लिए नया नहीं होता है, क्योंकि प्रदेश में सत्ता बदलने पर प्रशासन का सामना सत्ता के नए गुंडों से होता रहता है। सत्ता के इन्हीं गुंडों की मेहरबानी से जनता-जनार्दन पाँच वर्ष में किसी भी राजनीतिक दल की सत्ता को बदल देती है।

राजनीति में बाग़ी, दाग़ी

पहले समाज में जब किसी का शोषण एवं दमन किया जाता था तो वह बंदूक़ उठाकर जंगलों में कूद पड़ता था तथा बाग़ी हो जाता था। घने जंगलों, बीहड़ों में अपना डेरा डाल कुख्यात डाकू गिरोह बनाकर समाज से बदला लेता था। ये बाग़ी ग़रीबों के मददगार तथा समाज के ऊँचे तबकों के दुश्मन हुआ करते थे। धीरे-धीरे जैसे-जैसे समाज का विकास होता गया, बाग़ी कम होते गए और आजकल बीहड़ों में बाग़ी बने डाकुओं की संख्या लगभग ख़त्म हो गई है। ये बाग़ी आजकल की राजनीति में पैदा हो गए हैं।

आजकल अपने स्वार्थ के लिए बाग़ी होना राजनीति में फ़ैशन हो गया है। किसी को जब पार्टी चुनाव

में टिकट नहीं देती है तो वह बाग़ी होकर अपनी ही पार्टी के ख़िलाफ़ खड़ा हो जाता है। यदि बाग़ी चुनाव जीत जाता है, तो उसकी पार्टी उसे ससम्मान पुनः अपनी पार्टी में शामिल कर लेती है। बाग़ी ज़्यादा चतुर हुआ तो मोलभाव करके बड़ा पद भी विपक्षियों से साँठगाँठ कर हथिया लेता है। अपनी पार्टी से बग़ावत कर बाग़ी बनकर कुछ तो प्रधानमंत्री तक की कुर्सी पर पहुँच गए।

ठीक ऐसे ही राजनीति में आजकल दाग़ियों की संख्या बढ़ती जा रही है। उजले दामन पर काला दाग़ लगनेवाले को दाग़ी कहते हैं। इन दाग़ियों पर अपहरण, लूट, बलात्कार, डकैती, भ्रष्टाचार के संगीन आरोप रहे हैं तथा विभिन्न प्रकरणों में इनके नाम थाने में दर्ज हैं। एक से बढ़कर एक दाग़ी सभी दलों के पास हैं। दाग़ियों के मामले में किसी भी पार्टी का दामन उजला नहीं है। एक राज्य में एक दाग़ी को एक बार गठबंधन सरकार में गृह राज्यमंत्री तक बना दिया गया था तथा जब उनका बॉयोडेटा सामने आया तो उन्हें मंत्रीपद से हटाना पड़ा था। आजकल मुसीबत यह है कि यदि कोई पार्टी दाग़ियों को दरकिनार करना चाहे तो मूल पार्टी ही नहीं बचेगी, क्योंकि सभी पार्टियों में अब दाग़ियों का बहुमत बढ़ता ही जा रहा है। एक जानकारी के अनुसार दिल्ली में हमारे पाँच सौ पैंतालीस रहनुमाओं में से उनतीस पर अपनी पत्नी को प्रताड़ित करने के आरोप में मुक़दमे चल रहे हैं। सात की भ्रष्टाचार के मामलों में गिरफ़्तारी तक हुई है तो उन्नीस पर तीन से ज़्यादा आपराधिक मुक़दमे चल रहे हैं। एक सौ सत्रह बलात्कार, डकैती, लूट के मामलों में संगीन आरोपी हैं तथा अभी जाँच के दायरे में हैं। इक्कीस पर विभिन्न धाराओं को तोड़ने का आरोप है, तो चौरासी को विभिन्न मामलों में आर्थिक दंड दिया गया है। यह केवल भारत की राजधानी दिल्ली की बानगी है। समूचे देश के प्रदेशों की विधानसभाओं के आँकड़े यदि इकट्ठे किए जाएँ तो राजनीति व प्रजातंत्र से जनता का बचा-खुचा विश्वास ही उठ जाएगा।

ऐसे में बाग़ियों और दाग़ियों पर चिल्लाहट ठीक नहीं है। उनसे त्यागपत्र लेना या माँग करना उचित नहीं है। जिस तरह नंगे, दंगे और भिखमंगे राष्ट्र की पहचान हैं, उसी तरह बाग़ी और दाग़ी राजनीति की धरोहर हैं।

कैरियर को लेकर पिता-पुत्र की बातचीत

'पापा, आप तो कहते थे कि सबसे अच्छी नौकरी कलैक्टर और एस॰पी॰ की होती है तथा थोड़ा मेहनत करके पढ़-लिख लोगे तो ज़िंदगी बन जाएगी। मगर यहाँ तो तीन सांसदों ने मिलकर एक ज़िले के कलैक्टर को कलैक्टरी भुलाने की धमकी दे डाली और बेचारे कलैक्टर महोदय आप बैठिए, आप बैठिए ही कहते रहे। मुझे नहीं बनना कलैक्टर। मैं तो...

'ऐसा नहीं है बेटा। कलैक्टर के कई अन्य कार्य भी होते हैं। राजनेता तो अक्सर अधिकारियों को और जनता को घंटों इंतज़ार कराते हैं, तब कोई उन्हें नहीं भगाता। हो सकता है कि कलैक्टर को वाकई कोई कार्य आ गया हो। राजनेताओं का इतना ग़ुस्सा ठीक नहीं।'

'पापा, मज़ा तो राजनेता बनने में ही है। देखा नहीं आपने थोड़ी देर हो जाने पर, कैसे निपटाया सांसद ने, कलैक्टर को। तेरे-मेरे जैसे शब्दों का प्रयोग कर बता दिया कि सांसद की पॉवर क्या होती है। अरे, जब आपके पास पॉवर है और उसका उपयोग ही न करो तो पॉवर किस काम की।'

'बेटा, उनकी पॉवर टैंपरेरी होती है। कलैक्टर का मतलब आई॰ए॰एस॰ होता है। लोग इसे इंडियन एयरकंडीशंड सर्विस ऐसे ही नहीं कहते। असली मज़ा इन्हीं नौकरियों में आता है।'

'मगर पापा, वे तो कह रहे थे कि कलैक्टर प्रदेश सरकार के एजेंट हैं।'

'ऐसा नहीं है बेटा। कलैक्टर किसी का एजेंट नहीं होता। वह तो जो भी सरकार होती है, उसका हो जाता है। वह तो भीष्म पितामह की तरह सिंहासन के साथ होता है।'

'पर पापा, इतना पढ़ो-लिखो और फिर कलैक्टर बनो और बाद में कोई ऐसी बेइज़्ज़ती कर दे, तो उससे तो अच्छा है कि कलैक्टर बनें ही क्यों? राजनेता ही क्यों न बनें?

'बेटा ऐसा नहीं है। राजनेता बनना भी इतना आसान नहीं है। पहले मोहल्ले स्तर की, फिर वार्ड की और फिर पूरे गाँव या शहर की पहलवानी करनी पड़ती है। गुटबाज़ी के हिसाब से नेता का हाथ और साथ चाहिए। टिकट के लिए काफ़ी पापड़ बेलने पड़ते हैं। टिकट मिल जाए तो जीतने के लिए बहुत-कुछ करना

पड़ता है। बहुत दिक़्क़तें हैं, तुम नहीं समझोगे। इसलिए तू पढ़-लिख ही ले।'

'फिर भी पापा आप ऐसा एक बार सोच लो कि मैं कौनसा कैरियर पकड़ूँ।'

'बेटा, इनकी दादागिरी सिर्फ़ पाँच साल के लिए होती है। अच्छा व्यवहार रहा तो और पाँच साल।'

'पर पापा सभी राजनेता खराब नहीं होते हैं। राज्यसभा में जानेवाले तो विद्वान भी होते हैं।'

'हाँ बेटा, आजकल राज्यसभा वाले भी एन॰जी॰ओ॰ के नाम पर विकलांगों का सरकारी पैसा खाकर, ऐश कर रहे हैं।'

'पापा, आप तो उनकी हैसियत देखो। असली कलैक्टर तो राजनेता ही होते हैं। देखा नहीं आपने, कैसे उनके आगे-पीछे कमांडों और कारकेड चलते हैं।'

'अरे बेटा, ऐसा नहीं है। असली कलैक्टर न तो कलैक्टर है और न ही राजनेता। कलैक्टर भी जनसेवक होते हैं तो राजनेता तो जनता के वोट से ही चुने जाते हैं।'

'मगर पापा, जनता तो कुछ बोलती ही नहीं है।'

'सही है, बेटा। मगर जनता जब अपनी कलैक्टरी पर उतरती है, तो इन्हें दरकिनार कर किन्नरों और निर्दलियों तक को जिता देती है। एक ही दल के पैंतीस वर्षों के शासन को छीन सकती है तो तीस साल से लगातार जीतनेवाले को घर बैठा सकती है। एक बात और कि, कलैक्टर रिटायर्ड होकर राजनेता बन सकता है, मगर राजनेता बनने वाले न तो पहले और न बाद में कभी कलैक्टर बन सकते हैं।'

'पापा, आप मुझे कन्फ़्यूज कर रहे हैं।'

'चल अब बहुत हो गया, चुपचाप जाकर पढ़ाई कर।'

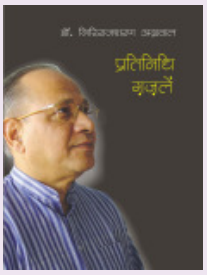

डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल

प्रतिनिधि ग़ज़लें

सं॰ डॉ॰ शिवाजी एन॰ देवरे

प्रकाशक :
हिंदी साहित्य निकेतन
बिजनौर (उ॰प्र॰)

मूल्य : दो सौ रुपए

डॉ॰ हरीशकुमार सिंह

जन्म : 7 नवंबर 1963, उज्जैन (म॰प्र॰)

शिक्षा : एम॰ए॰ (हिंदी, अर्थशास्त्र), पी-एच॰डी॰, एम॰बी॰ए॰, एल-एल॰बी॰

सृजन : ये है इंडिया (व्यंग्य-संग्रह), आँखों देखा हाल (हास्य-व्यंग्य कविताएँ) लिफ़्ट करा दे (व्यंग्य संग्रह), टेपा हो गए टॉप, हास्य-व्यंग्य के अनूठे आयोजन अखिल भारतीय टेपा सम्मेलन एवं टेपा सम्मेलन के संस्थापक, प्रसिद्ध व्यंग्यकार डॉ॰ शिव शर्मा पर केंद्रित पुस्तक टेपा राग का संपादन ।

नई दुनिया, दैनिक भास्कर, नवभारत जैसे प्रमुख समाचारपत्रों में व्यंग्य प्रकाशित। आकाशवाणी से खेलवार्ता, परिचर्चा एवं व्यंग्यों का प्रसारण। पत्रलेखक के रूप में कई पुरस्कार प्राप्त। अखिल भारतीय टेपा सम्मेलन के संयुक्त सचिव तथा साहित्यिक संस्था 'साहित्य मंथन' के अध्यक्ष। उज्जैन स्पोर्ट्स राइटर्स एसोसिएशन के अध्यक्ष, प्रेस क्लब के उपाध्यक्ष तथा अन्य प्रमुख संस्थाओं से संबद्ध।

पुरस्कार : खेलमित्र के रूप में म॰प्र॰ के मुख्यमंत्री द्वारा सम्मानित, व्यंग्य-लेखन के लिए 'शब्द प्रवाह' साहित्य सम्मान।

संप्रति : वर्तमान में भारतीय जीवन बीमा निगम में अधिकारी।

संपर्क : सी 1/9, ऋषिनगर, उज्जैन (म॰प्र॰)
दूरभाष : 0734-2510293, 09425481195

अफ़लातून की अकादमी

डॉ॰ शिव शर्मा

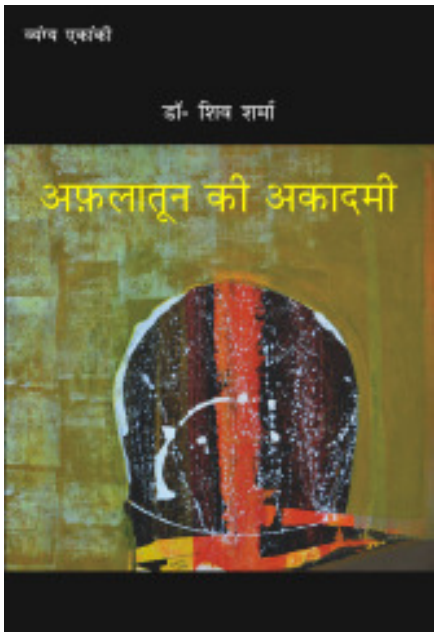

पात्र

प्राचार्य
एक ग्राहक
दूसरा ग्राहक
तीसरा ग्राहक
चौथा ग्राहक
अध्यक्ष
सचिव
चपरासी
उम्मीदवार
शिक्षक-1
शिक्षक-2
एक छात्र
दूसरा छात्र

(सड़क और दुकानों के मध्य का रिक्त स्थान। एक साइनबोर्ड लटकता हुआ– 'अफलातून की प्राइवेट अकादमी उर्फ राष्ट्रीय कॉलेज।' नीचे छोटे अक्षरों में अनुभवी प्रोफ़ेसरों द्वारा चलाया जाने वाला एकमात्र कॉलिज, बीच में एक मोनोग्राम था, जिसमें अफ़लातून अपने शिष्यों से 'डॉयलाग' करते हुए दर्शाया गया था। बोर्ड के ठीक नीचे एक लकड़ी की कुर्सी और टेबिल रखी थी। खादी के वस्त्र पहने एक व्यक्ति रसीद-बुक लिए बैठा था। वह क्लर्क लगता था, किंतु था प्राचार्य। वह अपनी रिटायर्ड-लाइफ़ को आधे दामों में लगा रहा था। कुछ ग्राहकों को आते देख, वह व्यस्तता का अभिनय करता है। अपने को आफ़िस में बैठा मान घंटी बजाता है। एक स्टूल पर बैठा, दूसरा व्यक्ति चरमराकर उठता है। यह इस कॉलेज का एकमात्र भृत्य है। यह अपने को उत्तर-वैदिककाल के राजा से कम नहीं मानता। क्योंकि यह एकमात्र 'होल टाइमर' है। वह रोटी बनाने से लेकर, बोर्ड उतारने और फ़र्नीचर जमाने तक का काम करता है।)

(भृत्य के तेवर से प्राचार्य सकपकाता है)

भृत्य : (प्राचार्य से) बिना वजह क्यों 'टन-टन' करते हो?

प्राचार्य : (धीरे से) चुप, ग्राहक आ रहे हैं। जब वे आया करें, तब खड़े हो जाया करो। लगे कि कालेज का आफ़िस है, सड़क नहीं।

(भृत्य हाथ की बीड़ी फेंक देता है। एक हाथ में पानी का गिलास लेकर खड़ा हो जाता है।)

एक ग्राहक : आपके कालेज में कौन-कौनसे विषय पढ़ाए जाते हैं?

प्राचार्य : यह पूछो कि कौनसे नहीं पढ़ाए जाते!

दूसरा : फीस क्या है?

प्राचार्य : अकादमी का ख़र्चा चल जाए। किराया अधिक है। यह ग़रीबों की संस्था है।

केवल आठ रुपए के साइन-बोर्ड बनवाने के व्यय से सब प्रारंभ हुआ था।

तीसरा : मैं दूसरे शहर में नौकरी करता हूँ, 'प्राक्सी' का क्या होगा?

प्राचार्य : तुम चाहो तो स्वर्ग में रहो, प्रॉक्सी लगती रहेगी। बस, फीस पूरी दो। परीक्षा फ़ार्म पर हस्ताक्षर कर दो।

चौथा : पढ़ाएगा कौन?

प्राचार्य : साइन-बोर्ड पढ़ना नहीं आता।

पहला : उनके नाम तो होंगे।

प्राचार्य : प्राचीनकाल में संप्रदाय होते थे, नाम नहीं। आश्रम या अकादमी होते थे, व्यक्ति नहीं।

(ग्राहक 'प्रॉस्पैक्टस' लेकर चले जाते हैं। प्राचार्य प्रसन्न मुद्रा में बैठता है। एक नेतानुमा व्यक्ति आता है। वह कॉलेज का सचिव है। चपरासी और प्राचार्य खड़े हो जाते हैं। सचिव खड़ा रहने की मुद्रा में बैठता है)

सचिव : कहिए, कुछ आमदनी हुई या कविताई करते रहे!

प्राचार्य : श्रीमान् कविताई तो 'रिटायर' होने के बाद ही बंद कर दी। वह तो गवर्नमैंट सर्विस की चीज़ है। अब तो ग्राहक टापता रहता हूँ।

सचिव : मैं नगरनिगम की 'पॉलिटिक्स' में लगा हूँ। सेठ चंदामल की खाट खड़ी करनी है। इधर आप ध्यान रखें। अपनी यह दुकान बंद न हो जाए। इससे ही तो शहर की 'पॉलिटिक्स' चलती है।

प्राचार्य : हाँ, कुछ लड़के आए थे। चिल्ला रहे थे कि क्लास कबसे शुरू होगी? मैंने समझा दिया कि समाजवादी समाज-रचना का कॉलेज है। जब तक इस देश के एक-एक ग़रीब को पढ़ने की व्यवस्था न हो जाए, हम 'एडमिशन' बंद नहीं करेंगे।

सचिव : ठीक है। रजिस्टर खोलकर रखें। परीक्षा के एक घंटे पूर्व तक भी भर्ती करें और फ़ीस लें। आपकी इस योग्यता के कारण ही तो आपको प्राचार्य बनाया है।

प्राचार्य : हाँ भइयाजी, यह तो बताओ कि अध्यक्षजी कब आ रहे हैं? साक्षात हनुमान का रूप हैं। उनके चेहरे की सौम्यता निहारे कई दिन हो गए।

(सत्र मध्यांतर। शिक्षकों के लिए 'इंटरव्यू' हो रहे हैं। चीकट कपड़े पहने, एक हल्कट नेता, जो तेलधानी उद्योग का अध्यक्ष भी है, अध्यक्ष की कुर्सी पर बैठा है। वाद-संवाद के माध्यम से इंटरव्यू चल रहे हैं)

अध्यक्ष : (एक उम्मीदवार से) तुम किसके आदमी हो?

उम्मीदवार : श्रीमान् मैं समझा नहीं?

अध्यक्ष : तुम्हारा कोई 'सोर्स-वोर्स' है या ऊँट की तरह चले आए हो?

(चीकट टोपी से उनका उन्नत ललाट, थोड़ी देर के लिए छिप जाता है, जैसे घने बादलों के बीच चाँद)

उम्मीदवार : वह तो नहीं है। हाँ, थ्रू-आउट फ़र्स्ट हूँ।

अध्यक्ष : कई देखे हैं फ़र्स्ट किलास, तो बताओ गांधीजी कौन थे।

उम्मीदवार : मैं मनोविज्ञान विषय के लिए आया हूँ।

अध्यक्ष : (खिसियाकर) तो क्या हुआ, गांधीजी 'मनोविज्ञान' नहीं जानते थे?

एक सदस्य : मनु महाराज को कौन नहीं जानता!

अध्यक्ष : अच्छा यही बताओ, 'मनु' कौन थे?

उम्मीदवार : (घबराकर) आप किसकी बात कर रहे हैं।

(चयन समिति के सदस्य, उम्मीदवार के भागने तक खिलखिलाते रहते हैं। एक दूसरा उम्मीदवार खड़ा हो जाता है।)

(दो-चार व्यक्तियों का आगमन। वे भूखे और बीमार से लगते हैं। वे इस अकादमी के ऑनरेरी टीचर हैं)

शिक्षक-1 : (प्राचार्य से) महोदय कुछ फीस-बीस आई? एकाध महीने का एडवांस तो दे दीजिए। पूरा साल फोकट में निकल गया।

प्राचार्य : देखिए, धौंस की ज़रूरत नहीं। पैसा आएगा तो मिलेगा। आपको किसने न्यौता दिया था, यहाँ का? कहीं नौकरी न मिली, यहाँ अनुभव लेने आ गए।

शिक्षक-2 : (झल्लाकर) चांस मिल गया। पाँच बड़े प्रोफ़ेसरों की कॉपियाँ घसीटकर लाया हूँ, इसे बेगार कहते हैं।

सचिव : अनुशासन बनाए रखिए।

शिक्षक-2 : पहले वेतन तो दिलवाइए।

सचिव : समय आने पर मिलेगा। मैंने आठ रुपए में यह संस्था प्रारंभ की थी। साइन-बोर्ड लिखवाया उधार, टेबिल-कुर्सी किराए पर! यूनिवर्सिटी की फीस उधार। फिर भी ज्ञान एवं शिक्षा के प्रसार की ललक है, लगा हूँ।

शिक्षक-1 : सरकारी ग्रांट का क्या हुआ?

सचिव : वह भी मिलेगी। शिक्षा मंत्री के जमाई को अड़ा रखा है। चुनाव के बाद ही हो सकेगा। जैसे ही ग्रांट मिली, आपका आधा-आधा पेमेंट हो जाएगा।

(सत्र की समाप्ति से कुछ पहले। घुड़सालनुमा किराए के मकान में कक्षाएँ विधिवत् चलती हैं। कुछेक फालतू छात्र पढ़ने आते हैं। एक दादा छाप छात्र आकर प्राचार्य से भिड़ता है।

एक छात्र : (प्राचार्य से) आपने फ़ीस तो पाई-पाई ले ली। साइकिल स्टेंड कहाँ है, खेल-कूद कहाँ होंगे?

प्राचार्य : देशी खेलों पर ज़ोर देना राष्ट्रीय नीति है। कबड्डी और खो-खो खिलाए जाएँगे।

दूसरा छात्र : सांस्कृतिक कार्यक्रम कब होंगे? चौबीस रुपए फ़ीस वसूल कर रखी है।

प्राचार्य : गरीब छात्रों की फ़ीस भर देंगे।

दूसरा छात्र : फ्री-शिप तो किसी की नहीं हुई?

प्राचार्य : (मुस्कराकर) गुप्तदान में विश्वास है। इस अकादमी को अफलातून की अकादमी बनाना है। तुम्हें चाँद और तारों को तोड़कर लाना है। फ़ीस-वीस की बात मत करो।

(चपरासी का प्रवेश)

चपरासी : श्रीवास्तव मैडम के सर आए हैं। मैडम अस्पताल में भरती हैं।

प्राचार्य : फिर पढ़ाएगा कौन?

चपरासी : मैडम के सर पढ़ाने आए हैं। जब तक मैडम अस्पताल में रहेंगी, वह पढ़ाएँगे।

प्राचार्य : ठीक है चुप रहो। उनसे पूछकर आओ कि वह कौनसा विषय पढ़ाएँगे। उनका ही या कोई दूसरा?

(वार्षिक स्नेह सम्मेलन। ग्रामोफ़ोन से रिकॉर्ड बज रहा है–कब मिलोगे...। छात्र झंडियाँ बाँध रहे हैं। अध्यक्षजी का आगमन। प्राचार्य का स्वागत-भाषण)।

प्राचार्य : मान्यवर अध्यक्षजी, क्षमा करें, कर्मयोगी, मनस्वी, निष्काम अध्यक्षजी, आपके विद्या के प्रति अनुराग का ही यह फल है कि हम रिटायरमेंट के बाद यहाँ बैठे हुए हैं। आप साक्षात् नारायण का रूप हैं और जो शिक्षा-मंत्राणीजी प्रमुख अतिथि के रूप में आई हैं-साक्षात् देवी लक्ष्मीजी का रूप हैं।

(छात्रों के विरोधी गुट की आवाज़ें बढ़ती हैं।

एक छात्र : (खड़े होकर) हमारी फीस वापस करो।

दूसरा छात्र : जेबी एकाडेमी नहीं चलेगी।

तीसरा छात्र : हमारे पैसों का हिसाब दो।

(हुड़दंगी छात्रों को आशीर्वाद देने वाले शिक्षक, मन ही मन प्रसन्न होते हैं। सचिव बेचैनी से उठकर छात्रों की ओर लपकता है। वह छात्र-नेताओं को होटल ले जाता है।)

सचिव : (छात्र-नेताओं से) तुम हमारे रास्ते में क्यों आ रहे हो?

एक छात्र : तुम हमारी फीस क्यों खा रहे हो?

सचिव : अभी तुम क्या खाओगे? डोसा या समोसा?

दूसरा छात्र : हमारी फ़ीस वापस कर दो।

सचिव : तुम दोनों की फीस माफ हो जाएगी, प्रोग्राम चलने दो, वरना शिक्षा-मंत्री ग्रांट नहीं देंगे।

(दोनों छात्र नेता समोसा खाकर चले जाते हैं।)

(शिक्षक प्रसन्न हैं। ग्रांट आ चुकी है। वेतन का प्रथम दिवस है। क्लर्क-कम प्राचार्य के हाथ में वेतन पत्रक है। उस पर वह गर्व से सबके हस्ताक्षर लेता है। शिक्षक वेतन की रक़म गिनने में व्यस्त हैं।)

शिक्षक-1 : यह क्या, वेतन तो आधा भी नहीं है!

प्राचार्य : तो क्या सरकारी यतीमखाने के मास्टर हो, जहाँ फोकट का वेतन मिलता रहे।

शिक्षक-2 : हस्ताक्षर तो पूरे 320 पर करवाए हैं, फिर 420 कैसी?

प्राचार्य : यह कालेज चलाना है या ताले लगवाने

हैं। ग्रांट पूरी कहाँ मिली!

सचिव : (नाराज़ होकर) अगर यों वेतन बाँटता गया तो यह अकादमी बंद हो जाएगी।

(वह गंभीर होकर ठंडी साँस खींचता है! सभी शिक्षक इससे सहम जाते हैं।)

शिक्षक-1 : (डरते-डरते) वह जो सट्टा बाज़ार के व्यापारियों के धर्मखाते से रक़म आती है!

सचिव : (आँख निकालकर) वह कमेटी की मीटिंगों पर खर्च हो जाती है। कुछ और पूछना है? वेतन लेना है तो लो वरना शिकायत करो।

(शिक्षक अधूरा वेतन लेकर प्रसन्न होते हैं।)

(तीन-तीन प्राइवेट शिक्षण-संस्थानों में रिटायर हुए एक शिक्षक चल बसते हैं। उनके असामयिक निधन पर एक शोक-सभा होती है। एक प्रस्ताव भी पारित होता है।)

प्राचार्य : हमारे प्रिय मित्र के निधन से हम क्षुब्ध हैं। तीन मिनिट का मौन रखें, हम उनकी आत्मा के लिए परमपिता से प्रार्थना करते हैं। भगवान उन्हें पुनः जन्म दे और वे हमारी अकादमी की सेवा करें।

शिक्षक-1 : (धीरे से) नहीं, नहीं, शाप मत दो। भगवान, उसे जानवर बना दें पर शिक्षक न बनाएँ।

शिक्षक-2 : मृतात्मा के परिवार की हमें सहायता करनी चाहिए।

सचिव : हमें खेद है कि अपने विषय का योग्यतम जानकार चल बसा। हाँ, दुर्दैव, अब क्या होगा। हमने सारे क़ानून छान मारे, हमारी संस्था के पास कोई 'मद' नहीं कि मृतात्मा के परिवार की सहायता कर सकें। हम, वह कॉलम खोज रहे हैं, कुछ भी गुंजाइश होगी तो मृतक के परिवार को कुछ दे सकेंगे। अभी यह शोक-प्रस्ताव पारित करना ज़रूरी है।

(सब आँखें मूँदकर मृतात्मा को स्मरण करते हैं। केवल तीन मिनिट के लिए। फिर रोज़मर्रा की तरह, सब शुरू हो जाता है।)

डॉ॰ शिव शर्मा

जन्म : 25 दिसंबर 1938, राजगढ़ (ब्यावरा) म॰प्र॰

शिक्षा : एम॰ए॰, पी-एच॰डी॰

कार्यक्षेत्र : पूर्व प्राचार्य, माधव कॉलेज, उज्जैन; अध्यक्ष, सांदीपनि महाविद्यालय, उज्जैन; 25 वर्षों तक आकाशवाणी-संवाददाता

संप्रति : म॰प्र॰ राज्यस्तरीय स्वतंत्र-पत्रकार (मान्यता प्राप्त); सदस्य, संभागीय सतर्कता समिति, उज्जैन (लोकायुक्त संगठन, म॰प्र॰); सचिव, सांदीपनि कला, वाणिज्य एवं विधि महाविद्यालय, उज्जैन।

कृतियाँ : जब ईश्वर नंगा हो गया, चक्रम दरबार, शिव शर्मा के चुने हुए व्यंग्य, टेपा हो गए टॉप, काल भैरव का खाता, थाना आफ़तगंज (एकांकी), बजरंगा (व्यंग्य-उपन्यास), अपने-अपने भस्मासुर (व्यंग्य), टेपाराग (व्यंग्य-संकलन), अध्यात्म का मार्केट (व्यंग्य); अन्य-जंगे-आज़ादी में ग्वालियर-इंदौर (स्वतंत्रता-आंदोलन का इतिहास); उर्दू, मराठी, पंजाबी, तेलुगु में व्यंग्य-रचनाएँ प्रकाशित। सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में व्यंग्य-रचनाएँ प्रकाशित।

विशेष : हास्य-व्यंग्य के अखिल भारतीय टेपा-सम्मेलन का 42 वर्षों से निरंतर संचालन।

पता : सी-42 ऋषिनगर, उज्जैन (म॰प्र॰)

दूरभाष : 0734-2510400; 09424017200

सुकेश साहनी

जन्म : 5 सितंबर, 1956 (लखनऊ); शिक्षा : एम. एस-सी.(जियोलॉजी), डीआईआईटी (एप्लाइड हाइड्रोलॉजी) मुम्बई से। कृतियाँ : डरे हुए लोग, ठंडी रजाई (लघुकथाएँ), मैग्मा और अन्य कहानियाँ, (कहानियाँ), अक्ल बड़ी या भैंस (बालकथाएँ), अनेक रचनाएँ पाठ्यक्रम में शामिल, 'रोशनी' कहानी पर दूरदर्शन के लिए टेलीफ़िल्म। संपादन : हिन्दी लघुकथा की पहली वेब साइट laghukatha.com का वर्ष 2000 से संपादन। दस संपादित लघुकथा-संग्रह; सम्मान : राष्ट्रीय स्तर पर कई सम्मान प्राप्त; संप्रति : भूगर्भ जल विभाग में सीनियर हाइड्रोजियोलॉजिस्ट; संपर्क : 193/21 सिविल लाइन्स, बरेली-243001; ई-मेल:sahnisukesh @gmail .com; फ़ोन : 0581-2429193, 9335280003

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु

जन्म : 19 मार्च,1949 , हरिपुर , ज़िला-सहारनपुर; शिक्षा : एम॰ए॰ (हिंदी), मेरठ विश्वविद्यालय (प्रथम श्रेणी), बी॰एड्॰; रचनाएँ : माटी, पानी और हवा, अंजुरी भर आसीस, कुकड़ूँ कूँ, हुआ सवेरा (कविता-संग्रह), मेरे सात जनम (हाइकु-संग्रह), मिले किनारे (ताँका और चोका संग्रह संयुक्त रूप से डॉ॰ हरदीप संधु के साथ), झरे हर सिंगार (ताँका-संग्रह), धरती के आँसू, दीपा, दूसरा सवेरा (लघु उपन्यास), असभ्य नगर (लघुकथा-संग्रह), खूँटी पर टँगी आत्मा (व्यंग्य-संग्रह), भाषा-चंद्रिका (व्याकरण), मुनिया और फुलिया (बालकथा) हिंदी और अँग्रेज़ी में, झरना, सोनमछरिया, कुआँ (पोस्टर-कविताएँ); संपादन : 25 संपादित संग्रह; laghukatha.com (85 देशों में प्रसारित), hindihaiku. wordpress.com , trivenni.blogspot.com के संपादन में सहयोग; सेवा : केंद्रीय विद्यालय के प्राचार्य पद से सेवानिवृत्त; संप्रति: स्वतंत्र लेखन।

संपर्क : फ्लैट नं 76 (दिल्ली सरकार) रोहिणी सैक्टर-11, नई दिल्ली 110085

ई-मेल : rdkamboj@gmail.com;

मोबाइल : 09313727493

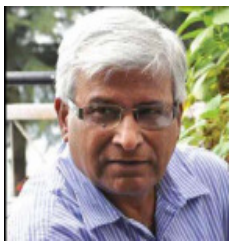

आदमी के बच्चे

प्रेम जनमेजय

–तुम कौन हो?

–रामू।

–रामू तुम्हारा भी नाम होता है क्या? पापा तो तुम लोगों को सिर्फ़ ग़रीब कहते हैं। मेरे पापा कहते हैं ग़रीब लोग गंदे रहते हैं। तुमने इतने गंदे कपड़े क्यों पहने हैं?

–पैसे नहीं हैं।

–तुम नहाते भी नहीं हो क्या? हमारा तो टॉमी भी रोज़ नहाता है, उसे हमारी आया नहलाती है, मुझे भी वही नहलाती है। तुम्हारी आया नहीं नहलाती?

–आया! आया कौन?

–वो जो घर का सारा काम करती है, नौकरानी! तुम्हारे यहाँ नौकरानी नहीं है क्या?

–है, मेरी माँ नौकरानी है, वो ही घर का सारा काम करती है। दूसरों के घर में भी काम करती है।

–तुम सारा दिन कैसे खेलते हो? तुम्हारे यहाँ ट्यूटर नहीं आता है क्या? होमवर्क नहीं करना पड़ता क्या?

–नहीं बापू के पास स्कूल भेजने के लिए पैसे नहीं हैं। टोली, कालू, गोली, रमती कोई भी स्कूल नहीं जाता है। बड़े होकर हमें मजूर जो बनना है। बापू कहते हैं, मजूर बनने के लिए पढ़ना नहीं होता है। बस बड़ा होना होता है।

–पापा मुझे तुम्हारे साथ खेलने को सख़्त मना करते हैं। कहते हैं, तुम लोग गटर में पलने वाले कीड़े हो। पर तुम तो मेरे-जैसे लगते हो, बस, गंदे कपड़े पहनते हो। हमारी टीचर कहती हैं, आदमी का ख़ून लाल होता है, तुम्हारा भी है क्या?

–हाँ, देखो। और उसने अभी-अभी खेल में लगी चोट से रिसता ख़ून का रंग दिखा दिया।

–अरे! तुम्हें तो चोट लगी है, जल्दी डिटॉल से साफ़ कर लो, डॉक्टर से टिटनेस का टीका लगवा लो, नहीं तो सैप्टिक हो जाएगा।

–कुछ नहीं होगा, ऐसे तो रोज लगती रहती है।

–तुम तो बहुत बहादुर हो। मुझे पापा से बहुत डर लगता है। वो मुझे हरदम पढ़ने को कहते हैं, घर के अंदर खेलने को कहते हैं। बाहर नहीं जाने देते हैं। पापा जितना बड़ा होकर मैं तुम्हारे साथ खेलने बाहर आ सकूँगा।

–नहीं, तब भी तुम नहीं आ सकोगे।

–क्यों?

–तब तुम पापा बन जाओगे।

नवजन्मा

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'

जिलेसिंह शहर से वापस आया तो आँगन में पैर रखते ही उसे अजीब-सा सन्नाटा पसरा हुआ लगा।

दादी ने ऐनक नाक पर ठीक से रखते हुई उदासी-भरी आवाज़ में कहा-'जिल्ले! तेरा तो इभी से सिर बँध ग्या रे। छोरी हुई है!'

जिलेसिंह के माथे पर एक लकीर खिंच गई।

'भाई लड़का होता तो ज़्यादा नेग मिलता। मेरा भी नेग मारा गया।' बहन फूलमती ने मुँह बनाया-'पहला जापा था। सोचा था, ख़ूब मिलेगा।'

जिले सिंह का चेहरा तन गया। माथे पर दूसरी लकीर भी उभर आई।

माँ कुछ नहीं बोली। उसकी चुप्पी और अधिक बोल रही थी। जैसे कह रही हो-'जूतियाँ घिस जाएँगी ढंग का लड़का ढूँढ़ने में। पता नहीं किस निकम्मे के पैरों में पगड़ी रखनी पड़ जाए।'

तमतमाया जिलेसिंह मनदीप के कमरे में घुसा। बाहर की आवाज़ें वहाँ पहले ही पहुँच चुकी थीं। नवजात कन्या की आँखें मुँदी हुई थीं। पति को सामने देखकर मनदीप ने डबडबाई आँखें पोंछते हुए अपना मुँह अपराध-भाव से दूसरी ओर घुमा लिया।

जिलेसिंह तीर की तरह लौटा और लंबे-लंबे डग भरता हुआ चौपाल वाली गली की ओर मुड़ गया।

'सुबह का गया अभी शहर से आया था। तुम दोनों को क्या ज़रूरत थी इस तरह बोलने?' माँ भुनभनाई। घर में और भी गहरी चुप्पी छा गई।

कुछ ही देर में जिलेसिंह लौट आया। उसके पीछे-पीछे संतु ढोलिया गले में ढोल लटकाए आँगन के बीचों-बीच आ खड़ा हुआ।

'बजाओ!' जिलेसिंह की भारी भरकम आवाज़ गूँजी।

तिड़क-तिड़-तिड़-तिड़ धुम्म, तिड़क धुम्म! ढोल बजा।

मुहल्ले वाले एक साथ चौंक पड़े। जिलेसिंह ने अलमारी से अपनी तुर्रेदार पगड़ी निकाली, जिसे वह शादी-ब्याह या बैसाखी जैसे मौक़े पर ही बाँधता था। ढोल की गिड़गिड़ी पर उसने पूरे जोश से नाचते हुए आँगन के तीन-चार चक्कर काटे। जेब से सौ का नोट निकाला और मनदीप के कमरे में जाकर नवजात के ऊपर वार-फेर की और उसकी अधमुँदी आँखों को हलके-से छुआ। पति के चेहरे पर नज़र पड़ते ही मनदीप की आँखों के सामने जैसे उजाले का सैलाब उमड़ पड़ा हो। उसने छलकते आँसुओं को इस बार नहीं पोंछा।

बाहर आकर जिलेसिंह ने वह नोट संतु ढोलिया को थमा दिया।

संतु और ज़ोर से ढोल बजाने लगा-तिड़-तिड़-तिड़ तिड़क-धुम्म, तिड़क धुम्म! तिड़क धुम्म! तिड़क धुम्म!!

दूसरा चेहरा

सुकेश साहनी

मिक्की की आँखों में नींद नहीं थी। वह पिल्ले को अपने पास नहीं रख पाएगा, सोचकर उसका मन बहुत उदास था। पिल्ले को लेकर ढेरों सपने बुने थे, पर घर आते ही सब-कुछ ख़त्म हो गया था। माँ ने पिल्ले को देखते ही चिल्लाकर कहा था, 'अरे, यह क्या उठा लाया तू? तेरे पिताजी ने देख लिया तो किसी की भी ख़ैर नहीं। उन्हें नफ़रत है इनसे। जा, इसे वापिस छोड़ आ।' दादी माँ ने बुरा-सा मुँह बनाया था, 'राम-राम! कुत्ता सोई जो कुत्ता पाले। बाहर फेंक इसे।' यह सब सुनकर उसे रोना आ गया था। कितनी ख़ुशामद करने पर दोस्त पिल्ला देने को राज़ी हुआ था। चूँकि दोस्त का घर दूर था, इसलिए एक रात के लिए उसे पिल्ले को घर में रखने की इजाजत मिली थी। पिताजी के आने से पहले ही उसने बरामदे के कोने में टाट बिछाकर उसे सुला दिया था।

कूँ-कूँ की आवाज़ से वह चौंक पड़ा। बरामदे में स्ट्रीट लाइट की वजह से हल्की रोशनी थी। पिल्ले को ठंड लग रही थी और वह बरामदे में सो रही दादी की चारपाई पर चढ़ने का प्रयास कर रहा था। वह घबरा गया, सोना तो दूर दादी अपना बिस्तर किसी को छूने भी नहीं देतीं, उनकी नींद खुल गई तो वे बहुत शोर करेंगी। पिताजी जाग गए तो पिल्ले को तिमंज़िले से उठाकर

नीचे फेंकेंगे, वह रज़ाई में पसीने-पसीने हो गया। सोते हुए माँ ने एक हाथ उस पर रखा हुआ था, वह चाहकर भी उठ नहीं सकता था। पिल्ले की कूँ-कूँ और पंजों से चारपाई को खरोंचने की आवाज़ रात के सन्नाटे में बहुत तेज़ मालूम दे रही थी।

दादी की नींद उचट गई थी, वह करवटें बदल रही थी। आख़िर वह उठकर बैठ गईं।

आनेवाली भयावह स्थिति की कल्पना से ही उसके रोंगटे खड़े हो गए। उसे लगा दादी पिल्ले को घूरे जा रही हैं।

दादी ने दाएँ-बाएँ देखा, पिल्ले को उठाया और पायताने लिटाकर रजाई ओढ़ा दी।

गोभोजन-कथा

बलराम अग्रवाल

'याद आया।' गऊशाला से भी निराश निकलते इंदर ने पत्नी को बताया—'अपना बशीर था न! वही, जो हाल के दंगों में मारा गया, उसकी गाय शायद गर्भिणी है।'

'छि:!'

'कमाल करती हो!' इंदर तमतमा गया—'बशीर के खूँटे पर बँधकर गाय, गाय नहीं रही, बकरी हो गई? याद है, दंगाइयों के हाथों से उस गाय को हलाल होने से बचाने के चक्कर में ही तो जान गई उस बेचारे की!'

'...'

'दो-चार, दस-पाँच दिन का समय बीच में दिया होता तो कहीं और भी तलाश कर सकते थे हम।' उसकी उपेक्षापूर्ण चुप्पी से क्षुब्ध होकर वह पुन: बोला—'शुभ मुहूर्त्त है, आज ही से शुरू करना होगा। पड़ गई साले ज्योतिषी के चक्कर में।'

चुप रही माधुरी। क्या कहती। संतान-प्राप्ति जैसे भावुक मामले में बेजान पत्थर और अव्वल अहमक तक को पीर-औलिया मानकर पूजने लगते हैं लोग। यह तो गाय थी, सजीव और साक्षात्। बशीर की ही सही। घर पहुँचकर उसने हाथ-मुँह धोए। लबालब तीन अँजुरी-भर गेहूँ का आटा एक बरतन में उलटा, तोड़कर गुड़ का एक टुकड़ा उसमें डाला और साड़ी के पल्लू से उसे ढाँपकर चल पड़ी बशीर के घर की ओर।

गाय बाहर ही बँधी थी, लेकिन गर्भिणी होना तय करने से पहले उसको कुछ देना माधुरी को ज्योतिषी की सलाह के अनुरूप नहीं लगा। सो साँकल खटखटा दी। सूनी आँखों और रूखे चेहरेवाली बशीर की विधवा ने दरवाज़ा खोला। देखती रह गई माधुरी, यह थी ही ऐसी या इंदर तो एक बार यह भी बताते थे कि बशीर का बच्चा इसके पेट में है!

'क्या हुक्म है?'

'मैं माधुरी हूँ, इंदर की पत्नी।'

कभी गाय तो कभी बशीर की बीवी के पेट को परखती माधुरी जैसे तंद्रा से जाग उठी—'आटा लाई हूँ, ज़्यादा तो नहीं, फिर भी, अपनी हैसियत-भर, तुम्हारे लिए जो भी बन पड़ेगा, हम करेंगे बहन!' बरतन के ऊपर से पल्लू हटाकर उसकी ओर बढ़ाते हुए उसने कहा—'संकोच न करो रख लो.. बच्चे की ख़ातिर।'

बशीर की विधवा ने फटी हुई चूनर को पेट पर सरका लिया और फफककर चौखट के सहारे सरकती हुई धीरे-धीरे वहीं बैठ गई।

जाति

अंकुश्री

स्टेशन पर ट्रेन की प्रतीक्षा में बैठे दो व्यक्तियों में काफ़ी देर से बातचीत हो रही थी। एक ने दूसरे से पूछा, 'आप किस जाति के हैं?'

'आदमी।'

'वह तो ठीक है। मगर आदमी में कौन जाति के आदमी हैं?''

'मैं आदमी हूँ, क्या मेरे लिए इतना काफ़ी नहीं है?'

'आपने समझा नहीं! मेरे पूछने का मतलब यह नहीं है।' कुछ रुककर, मगर परेशानी महसूस करते हुए उसने फिर पूछा, 'आदमी तो आपके जीव की जाति हुई। इससे पता चलता है कि आप घोड़ा, गदहा, उल्लू, साँप, कीट-पतंग आदि नहीं हैं, बल्कि आदमी हैं!'

'हाँ ! आप अब तो समझ गए?.... मैं आदमी हूँ।'

'आदमी तो हैं, वह मैं भी देख रहा हूँ। लेकिन आदमी में आप किस जाति के सदस्य हैं?'

'कोई किस जाति का सदस्य है, जीवन जीने के लिए उसके चेहरे पर यह लिखा रहना ज़रूरी है क्या?'

'आप मेरी बात समझ नहीं पा रहे हैं शायद।'

'समझ रहा हूँ, ख़ूब समझ रहा हूँ। और मैं अपनी जाति भी बता चुका हूँ, आदमी हूँ।' कुछ रुककर, 'आपकी जाति पूछने की मुझे ज़रूरत नहीं रह गई है, क्योंकि आप कम से कम मेरी जाति के तो हो ही नहीं सकते।'

तभी गाड़ी आ गई और दोनों हड़बड़ा कर अलग-अलग डिब्बों में चढ़ गए।

इंसानी रंग

सुभाष नीरव

अमरीक जिस समय शर्माजी के मकान में घुसा, बेहद डरा हुआ था और उसकी साँसें फूली हुई थीं। शर्माजी, उनकी पत्नी और बेटी सुषमा—तीनों के चेहरों पर उसे देखते ही भय की लकीरें खिंच गईं। और दिन होता तो शर्माजी—'आओ सरदारजी, बड़े दिनों में आना हुआ,' कहते हुए तपाक से मिलते। उनकी पत्नी और अमरीक के बीच देवर-भाभी के बीच होने वाली चुहलबाज़ी होती और बेटी सुषमा 'अंकल-अंकल' कहती फिरती।

शर्माजी ने तुरंत उठकर दरवाज़ा भीतर से बंद कर लिया। अमरीक हाँफते हुए बोला, 'सब स्वाहा हो गया, शर्माजी, सब स्वाहा हो गया। किसी तरह अपनी जान बचाकर भागा हूँ, बस।'

'तुझे किसी ने देखा तो नहीं इधर आते?' शर्माजी ने आगे बढ़कर धीमे स्वर में पूछा।

'मुझे नहीं मालूम...।' अमरीक ने जवाब दिया और अपनी हाँफती हुई साँसों पर काबू पाने की कोशिश करने लगा।

एकाएक बाहर शोर हुआ। शर्माजी ने तुरंत अमरीक को स्टोर में छिपाया और दरवाज़ा खोलकर मकान से बाहर आ गए।

'क्या बात है, भाई लोगो?' उन्होंने सामने खड़ी भीड़ की ओर देखकर पूछा। लोगों के चेहरे तने हुए थे और उनके हाथों में लाठियाँ, बरछे और कैरोसीन के डिब्बे थे।

'अरे, शर्माजी, आप!' किसी ने शर्माजी को पहचानते हुए कहा, 'हमारा मुर्गा तो नहीं छुपा आपके मकान में?'

'नहीं। भाई, चाहो तो देख लो अंदर आकर।'

लोगों पर शर्मा जी की बात का असर हुआ। वे लोग आगे बढ़ गए, लाठियाँ पीटते, शोर मचाते। शर्माजी ने भीतर से दरवाज़ा अच्छी तरह से बंद किया। फिर स्टोर में पहुँचकर उन्होंने अमरीक से पुनः वही सवाल किया, 'अमरीक, तुम्हें इधर आते किसी ने देखा तो नहीं था न?'

'मुझे नहीं मालूम, शर्माजी, मैं तो बस भागता आ रहा हूँ। पीछे मुड़कर मैंने देखा ही नहीं।' अमरीक अभी भी सहमा हुआ और भयभीत-सा लग रहा था। शर्मा जी ने उसे पानी पिलाया और माथे पर लगी चोट पर पुरानी चीर का एक टुकड़ा पानी में भिगोकर बाँध दिया।

पत्नी का संकेत पाकर वह बैठक में चले गए। पत्नी और बेटी, दोनों के चेहरे बुरी तरह डरे हुए थे।

'सुनो जी, वे फिर आ गए तो?' पत्नी ने घबराई हुई आवाज़ में कहा, 'हो सकता है, वे ज़बरदस्ती मकान में घुस आएँ।'

शर्माजी को चुप देख पत्नी ने फिर फुसफुसाना शुरू किया, 'उनका क्या भरोसा? रात होने जा रही है। ज़रा-सा शक पड़ते ही वे ज़रूर आएँगे। हो न हो, मकान में ही आग लगा दें। कितनी मुश्किलों से तो बना है यह मकान।'

मकान की बात पर शर्माजी सोच में पड़ गए। कितनी दिक्कतों और परेशानियों को झेलकर, अपना और बच्चों का पेट काट-काटकर बनवाया है मकान, अभी हाल में।

वह फिर अमरीक के पास गए। एक बार फिर पूछा, 'अमरीक, तुझे इस घर में घुसते किसी ने देखा तो नहीं न?'

शर्माजी की आँखों में तैरता हुआ भय अब अमरीक से छुपा नहीं रहा। उनकी पत्नी की फुसफसाहट और माँ-बेटी के डरे हुए चेहरे देख उसे लगा, उसे यहाँ नहीं आना था। वह बोला, शर्माजी, चलता हूँ। लगता है, वे लोग दूर निकल गए हैं।'

सहसा, शर्माजी अमरीक के आगे दीवार बनकर खड़े हो गए और बोले, 'ओय, की गल करदां ऐं अमरीकिया, मैं तैनू जाण देवांगा? नईं, तू नईं जाएँगा ओए, चाहे कुझ हो जावे।'

सहानुभूति

सतीशराज पुष्करणा

कहीं से स्थानांतरण होकर आए नए-नए अधिकारी एवं वहाँ की वर्कशाप के एक कर्मचारी रामू दादा के मध्य अधिकारी के कार्यालय में गर्मागर्म वार्तालाप हो रहा था।

अधिकारी किसी कार्य के समय पर पूरा न होने पर उसे ऊँचे स्वर में डाँट रहे थे–'तुम निहायत ही आलसी और कामचोर हो।'

'देखिए सर! इस तरह गाली देने का आपको कोई हक़ नहीं है।'

'क्यों नहीं है?'

'आप भी सरकारी नौकर हैं, और मैं भी।'

'चोप्प!'

'दहाड़िए मत! आप। ट्रांसफ़र से ज़्यादा मेरा कुछ भी नहीं कर सकते।'

'और वही मैं होने नहीं दूँगा।'

'आपको जो कहना या पूछना हो, लिखकर कहें या पूछें। मैं जवाब दे लूँगा, किंतु इस प्रकार आप मुझे डाँट नहीं सकते। वरना...'

'मैं लिखित कार्रवाई करके तुम्हारे बीवी-बच्चों के पेट पर लात नहीं मारूँगा। ग़लती तुम करते हो। डाँटकर प्रताड़ित भी तुम्हें ही करूँगा। तुम्हें जो करना हो कर लेना, समझे?'

निरुत्तर हुआ-सा रामू इसके बाद चुपचाप सिर झुकाए कार्यालय से निकल आया। बाहर खड़े साथियों ने सहज ही अनुमान लगाया कि आज घर जाते समय साहब की ख़ैर नहीं। दादा इन्हें भी अपने हाथ ज़रूर दिखाएगा, ताकि फिर वे किसी को इस प्रकार अपमानित न कर सकें।

इतने में उन्हीं में से कोई फूटा–'दादा! लगता है इसे भी सबक़ सिखलाना ही पड़ेगा।'

'नहीं रे! सबक तो आज उसने ही सिखा दिया है मुझे। वह सिर्फ़ अपना अफ़सर ही नहीं, बाप भी है, जिसे मुझसे भी ज़्यादा मेरे बच्चों की चिंता है।'

इतना कहकर वह अपने कार्यस्थल की ओर मुड़ गया।

माँ का कमरा

श्यामसुंदर अग्रवाल

छोटे-से पुश्तैनी मकान में रह रही बुज़ुर्ग बसंती को दूर शहर में रहते बेटे का पत्र मिला–'माँ, मेरी तरक्की हो गई है। कंपनी की ओर से मुझे बहुत बड़ी कोठी मिली है, रहने को। अब तो तुम्हें मेरे पास शहर में आकर रहना ही होगा। यहाँ तुम्हें कोई तकलीफ़ नहीं होगी।

पड़ोसन रेशमा को पता चला तो वह बोली, 'अरी रहने दे शहर जाने को। शहर में बहू-बेटे के पास रहकर बहुत दुर्गति होती है। वह बचनी गई थी न, अब पछता रही है, रोती है। नौकरों वाला कमरा दिया है, रहने को और नौकरानी की तरह ही रखते हैं। न वक़्त से रोटी, न चाय। कुत्ते से भी बुरी जून है।'

अगले ही दिन बेटा कार लेकर आ गया। बेटे की जिद के आगे बसंती की एक न चली। 'जो होगा देखा जावेगा' की सोच के साथ बसंती अपने थोड़े-से सामान के साथ कार में बैठ गई।

लंबे सफ़र के बाद कार एक बड़ी कोठी के सामने जाकर रुकी।

'एक ज़रूरी काम है माँ, मुझे अभी जाना होगा।' कह, बेटा माँ को नौकर के हवाले कर गया। बहू पहले ही काम पर जा चुकी थी और बच्चे स्कूल।

बसंती कोठी देखने लगी। तीन कमरों में डबल-बैड लगे थे। एक कमरे में बहुत बढ़िया सोफ़ा-सैट था। एक कमरा बहू-बेटे का होगा, दूसरा बच्चों का और तीसरा मेहमानों के लिए, उसने सोचा। पिछवाड़े में नौकरों के लिए बने कमरे भी वह देख आई। कमरे छोटे थे, पर ठीक थे। उसने सोचा, उसकी गुज़र हो जाएगी। बस बहू-बेटा और बच्चे प्यार से बोल लें और दो वक़्त की रोटी मिल जाए। उसे और क्या चाहिए।

नौकर ने एक बार उसका सामान बरामदे के साथ वाले कमरे में टिका दिया। कमरा क्या था, स्वर्ग लगता था–डबल-बैड बिछा था, गुस्लख़ाना भी साथ था।

टी॰वी॰ भी था और टेपरिकार्डर भी। दो कुर्सियाँ भी पड़ी थीं। बसंती सोचने लगी–काश! उसे भी कभी ऐसे कमरे में रहने का मौक़ा मिलता। वह डरती-डरती बैड पर लेट गई। बहुत नर्म गद्दे थे। उसे एक लोककथा की नौकरानी की तरह नींद ही न आ जाए और बहू आकर उसे डाँटे, सोचकर वह उठ खड़ी हुई।

शाम को जब बेटा घर आया तो बसंती बोली, 'बेटा, मेरा सामान मेरे कमरे में रखवा देता।'

बेटा हैरान हुआ, 'माँ, तेरा सामान तेरे कमरे में ही तो रखा है, नौकर ने।'

बसंती आश्चर्यचकित रह गई, 'मेरा कमरा! यह मेरा कमरा!! डबल-बैड वाला!'

'हाँ माँ, जब दीदी आती है तो तेरे पास सोना ही पसंद करती है। और तेरे पोता-पोती भी सो जाया करेंगे तेरे साथ। तू टी॰वी॰ देख, भजन सुन। कुछ और चाहिए तो बेझिझक बता देना।' उसे आलिंगन में ले बेटे ने कहा तो बसंती की आँखों में आँसू आ गए।

ख़ूबसूरत हाथ

डॉ॰ हरदीप कौर संधु

एक दिन अध्यापक ने दूसरी कक्षा के बच्चों को उनकी सबसे अधिक प्यारी किसी वस्तु का चित्र बनाने के लिए कहा।

किसी ने सुंदर फूल बनाया तो किसी ने रंग-बिरंगी तितलियाँ। कोई सूर्य, चाँद, सितारे बनाने लगा तो कोई अपना सुंदर खिलौना। कक्षा के एक कोने में बैठी करमो ने बदसूरत-से दो हाथ बनाए।

अध्यापक ने हैरान होकर पूछा,'ये क्या बनाया? हाथ! किसके हैं ये हाथ?'

'ये दुनिया के सबसे ख़ूबसूरत हाथ हैं; जो मेरी माँ के हैं।'

'तुम्हारी माँ क्या करती है?'

'वह मज़दूरिन है। दिन-भर सड़क पर पत्थर तोड़ने का काम करती हैं।' करमो ने सिकुड़ते हुए उत्तर दिया ।

बौना

हीरालाल नागर

अंततः फ़ैसला हुआ कि इस बार भी माँ हमारे साथ नहीं जाएगी। पत्नी और बच्चों को लेकर स्टेशन पहुँचा। ट्रेन आई और हम अपने गंतव्य की ओर चल पड़े। ठीक से बैठ भी नहीं पाए होंगे कि डिब्बे के शोर को चीरता हुआ फ़िल्मी गीत का मुखड़ा 'हम बने तुम बने एक दूजे के लिए' गूँज उठा। उँगलियों में फँसे पत्थर के दो टुकड़ों की टिक्...टिक्...टिकिर...टिकिर...टिक्...टिक् के स्वर में मीठी पतली आवाज़ ने जादू का-सा असर किया। लोग आपस में धँस- फँसकर चुप रह गए।

गाना बंद हुआ और लोग 'वाह-वाह' कर उठे। उसी के साथ उस किशोर गायक ने यात्रियों के आगे अपना दायाँ हाथ फैला दिया, 'बाबूजी दस पैसे!' मेरे सामने पाँच-छह साल का दुबला-पतला लड़का हाथ पसारे खड़ा था।

'क्या नाम है तेरा?' मैंने पूछा।

'राजू।'

'किस जाति के हो?' लड़का निरुत्तर रहा। मैंने लड़के से अगला सवाल किया, 'बाप भी माँगता होगा?'

'बाप नहीं है।'

'माँ है?'

'हाँ है, क्यों?' लड़के ने मेरी तरफ़ तेज़ निगाहें कीं।

'क्या करती है तेरी माँ?'

'देखो साब, उलटी-सीधी बातें मत पूछो। देना है तो दे दो।'

'क्या?'

'दस पैसे।'

'जब तक तुम यह नहीं बताओगे कि तुम्हारी माँ क्या करती है, मैं एक पैसा नहीं दूँगा।' मैंने लड़के को छकाने की कोशिश की।

'अरे बाबा! कुछ नहीं करती। मुझे खाना बनाकर खिलाती-पिलाती है और क्या करती है।'

'तुम भीख माँगते हो और माँ कुछ नहीं करती? भीख माँगकर खिलाते हो उसे?'

'माँ को उसका बेटा कमाकर नहीं खिलाएगा तो फिर कौन खिलाएगा?' लड़के ने करारा जवाब दिया। मेरे चेहरे का रंग बदल गया, जैसे मैं उसके सामने बहुत बौना हो गया हूँ।

साहित्यिक गतिविधियाँ

घमंडीलाल अग्रवाल पुरस्कृत

बालसाहित्यकार घमंडी लाल अग्रवाल की पुस्तक '101 शिशु गीत' को बालवाटिका बालसाहित्य पुरस्कार 2012 के लिए चुना गया है। 25 दिसंबर को भीलवाड़ा (राजस्थान) में आयोजित कार्यक्रम में यह पुरस्कार उन्हें दिया गया। इससे पहले उन्हें केंद्र सरकार के सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय का भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार और सात बार हरियाणा साहित्य अकादमी पुरस्कार मिल चुका है। अब तक इनकी 46 पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। घमंडीलाल अग्रवाल राजकीय वरिष्ठ कन्या माध्यमिक विद्यालय जैकमपुरा में विज्ञान के अध्यापक हैं।

अवनीश सिंह चौहान को सृजनात्मक साहित्य पुरस्कार

7 जनवरी को जयपुर के भट्टारकजी की नसियाँ स्थित इंद्रलोक सभागार में पं॰ झाबर मल्ल शर्मा स्मृति व्याख्यान समारोह का भव्य आयोजन किया गया। कार्यक्रम में मुख्य वक्ता एवं विशिष्ट अतिथि पूर्व सेनाध्यक्ष जनरल वी॰के॰ सिंह थे, जबकि पत्रिका समूह के प्रधान संपादक गुलाब कोठारी ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की।

जनरल वी॰के॰ सिंह और गुलाब कोठारी के कर-कमलों से अवनीशसिंह चौहान को सम्मानित किया गया। पत्रिका का वार्षिक सृजनात्मक साहित्य सम्मान-2013 के अंतर्गत श्री चौहान को 11000 रुपए नकद, सम्मान-पत्र और श्रीफल प्रदान किया गया। कविता में पहला पुरस्कार युवा कवि अवनीशसिंह चौहान के गीतों को दिया गया।

इस अवसर पर अपने वक्तव्य में जनरल सिंह ने कहा—दिनकरजी की रचनाएँ आज भी उन्हें प्रेरणा देती हैं। कविताओं में जीवन को सुंदर बनाने की शक्ति होती है।' कोठारी जी ने कहा—'आज लोग संवेदनहीन हो गए हैं उनमें संवेदना जगाने की ज़रूरत है।'

कविता में दूसरा पुरस्कार प्रीता भार्गव को दिया गया। कहानी में पहला पुरस्कार राहुल प्रकाश को तथा दूसरा पुरस्कार कथाकार मालचंद तिवाड़ी को दिया गया। पुरस्कार पत्रिका समूह के परिशिष्टों में वर्षभर में प्रकाशित कविताओं और कहानियों के लिए दिए जाते हैं। इस साल कहानी और कविता के निर्णायक मंडल में प्रसिद्ध व्यंग्यकार ज्ञान चतुर्वेदी, प्रसिद्ध कथाकार हबीब कैफ़ी और प्रफुल्ल प्रभाकर तथा जस्टिस शिवकुमार शर्मा, अजहर हाशमी और प्रोफेसर माधव हाड़ा थे।

इस अवसर पर पत्रकारिता के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य करनेवाले राजस्थान पत्रिका के पत्रकारों को भी सम्मानित किया गया था।

शिल्पायन द्वारा प्रवासी हिंदी कहानी : एक अंतर्यात्रा का प्रकाशन।

पुस्तक के संपादक सुषमा आर्य एवं अजय नावरिया।

वर्ष 2010 में कथा यू॰के॰ एवं डी॰ए॰वी॰ गर्ल्स कॉलेज, यमुनानगर ने संयुक्त रूप से मिलकर 3 दिवसीय प्रवासी साहित्य सम्मलेन का आयोजन किया था। इस सम्मलेन में पढ़े गए लेख इस पुस्तक में शामिल किए गए हैं।

इस सम्मलेन में 100 से अधिक साहित्याकारों ने विभिन्न विषयों पर अपने आलेख पढ़े। लगभग 18 प्रवासी साहित्यकारों ने ब्रिटेन, कनाडा, अमेरिका, आबू धावी, शारजाह आदि के लेखकों ने इस संगोष्ठी में भाग लिया। भिन्न विषयों पर आलेख पढ़े गए और पहली बार उपस्थित प्रवासी लेखकों के लेखन पर भारतीय आलोचकों ने आलेख-पाठ किया। इस संगोष्ठी में कनाडा से स्नेह ठाकुर, आबू-धावी से कृष्णा बिहारी, शारजाह से पूर्णिमा बर्मन और प्रवीण सक्सेना और ब्रिटेन से काउंसलर जकिया जुबैरी, डॉ॰ अचला शर्मा, दिव्या माथुर, नीना पाल, जय वर्मा, कृष्णकुमार, चित्रा कुमार, अरुण सब्बरवाल ने हिस्सा लिया। भारत से राजेंद्र यादव, संजीव, भगवानदास मोरवाल, प्रेम जनमेजय, भारत भारद्वाज, हरि भटनागर, महेश दर्पण, मधु अरोड़ा, उमेश चतुर्वेदी, अजय नावरिया, शंभु गुप्ता, विजय शर्मा, साधना अग्रवाल, अमरीक सिंह दीप, अरुण आदित्य, मनोज श्रीवास्तव, निर्मला भुराडिया, दिवाकर भट्ट, नीरजा माधव, पंकज सुबीर, नीलम शर्मा अंशु, अविनाश वाचस्पति एवं अजित राय जैसे जाने-माने साहित्यकारों ने गोष्ठी के दौरान अपने विचार रखे।

साहित्यिक संस्था 'अक्षरा' का सम्मान-समारोह

सम्मान समारोह स्व॰ श्री देवराज वर्मा की पुण्यस्मृति में उन्हें भावभीनी पुष्पांजलि अर्पित की गयी। इसके पश्चात् आयोजित सम्मान समारोह में झज्जर (हरियाणा) के चर्चित युवा कवि श्री राकेश 'मधुर' को निर्णायक मंडल द्वारा चयनित उनकी काव्यकृति 'चाँद को सब पता है' के लिए 'देवराज वर्मा उत्कृष्ट साहित्य सृजन सम्मान-2012' से सम्मानित किया गया। श्री मधुर को सम्मानस्वरूप प्रतीक चिह्न, अंगवस्त्र, सम्मानपत्र, श्रीफल नारियल एवं 1100 रुपए की सम्मान-राशि भेंट की गयी।

कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए सुप्रसिद्ध साहित्यकार नवगीतकवि श्री माहेश्वर तिवारी ने कहा–'राकेश 'मधुर' की कविताएँ भाषाई सहजता और बिम्बों की ताजगी की चाशनी में पगी हुई होती हैं।' मुख्य अतिथि लखनऊ से पधारे वरिष्ठ साहित्यकार श्री मधुकर अष्ठाना ने कहा–'मधुर की रचनाधर्मिता में समाज के सांस्कृतिक संकट की फिक्र साफ़ झलकती है।' विशिष्ट अतिथि वरिष्ठ गीतकार श्री अनुराग गौतम ने कहा–'मधुर की कविताएँ संवेदनात्मक अनुभूति जगाती हैं।' कार्यक्रम में सम्मानित कवि श्री राकेश 'मधुर' ने काव्यपाठ करते हुए कविता पढ़ी–'धुआँ / चूल्हे से उठकर / आँखों में जाता है / चुभता है सुई-सा /बहुत गुस्सा आता है / फिर दब भी जाता है / गुस्सा भूख से डर जाता है।'

कार्यक्रम का सफल संचालन मशहूर शायर डॉ॰ कृष्णकुमार 'नाज' ने किया। आभार अभिव्यक्ति संस्था के संयोजक योगेन्द्र वर्मा 'व्योम' ने की।

अकबर जैसा कोई दूसरा शायर नहीं-काज़मी

अकबर इलाहाबादी की शायरी एक मिसाल है, उन्होंने अँग्रेज़ी हुकूमत के दौर में बेबाक शायरी की और अपनी क़लम से अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए अँग्रेज़ी हुकूमत की बखिया उधेड़ दी। आज भी उर्दू साहित्य में अकबर से बड़ा हास्य-व्यंग्य का कोई दूसरा शायर नहीं है। यह बात प्रदेश सरकार के पूर्व महाधिवक्ता एम॰एम॰ए॰ काज़मी ने कही। वे 16 नवंबर को हिन्दुस्तानी एकेडेमी में अकबर इलाहाबादी के जन्मदिन पर आयोजित 'गुफ़्तगू' के कार्यक्रम में बोल रहे थे। कार्यक्रम के दौरान लखनऊ के नवाब शाहाबादी, गोरखपुर के राजेश राज, गाज़ीपुर के सरफ़राज आसी और इलाहाबाद के फ़रमूद इलाहाबादी को 'अकबर इलाहाबादी सम्मान' से नवाजा गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहे वरिष्ठ शायर एम॰ए॰ क़दीर ने कहा कि अबकर की जयंती पर 'गुफ़्तगू' द्वारा किया गया यह आयोजन बेहद सराहनीय है। इलाहाबाद में बहुत सी संस्थाएँ हैं, लेकिन अबकर की याद में कोई कार्यक्रम नहीं किया जाता, जबकि अकबर देश के सबसे बड़े हास्य-व्यंग्य शायर हैं। वरिष्ठ पत्रकार मुनेश्वर मिश्र ने कहा कि अकबर इलाहाबादी के तमाम शेर मुहावरों की तरह पत्रकारिता की दुनिया में इस्तेमाल किए जाते हैं, लेकिन इलाहाबाद में ही साहित्यिक बिरादरी उनकी उपेक्षा करती दिख रही है। पूर्व सभासद अखिलेश सिंह ने कहा कि नयी पीढ़ी भारतीय तहज़ीब से दूर होती जा रही है, साहित्य से बढ़ रही दूरी के कारण यह बुराई पैदा होने लगी है, इसे दूर करने की आवश्यकता है। एहतराम इस्लाम, रविनंद सिंह और शाहनवाज़ आलम ने अकबर इलाहाबादी के व्यक्तित्व और कृतित्व को रेखांकित करते हुए आलेख पढ़े। कार्यक्रम का संचालन गुफ़्तगू के संस्थापक इम्तियाज़ अहमद ग़ाज़ी ने किया।

कार्यक्रम के दूसरे सत्र में अखिल भारतीय मुशायरे का आयोजन किया गया, जिसमें सरवर लखनवी, शिवशरण बंधु, अहकम ग़ाज़ीपुरी, सौरभ पांडेय, वीनस केसरी, नरेशकुमार महरानी, अजयकुमार, स्नेहा पांडेय, सागर होशियारपुरी, शादमा ज़ैदी शाद, अनुराग अनुभव, नीतीश, सुशील द्विवेदी, अमनदीप सिंह, सनीसिंह, सतीशकुमार यादव, राना प्रतापसिंह, सलाह ग़ाज़ीपुरी, विमल वर्मा, पीयूष मिश्र, मिसदाक आज़मी आदि ने

कलाम पेश किया। अंत में कार्यक्रम के संयोजक शिवपूजन सिंह ने सबके प्रति आभार व्यक्त किया।

मनोज अबोध के ग़ज़ल संग्रह 'मेरे भीतर महक रहा है' का लोकार्पण

हिंदी दिवस की पूर्व संध्या पर रूसी सांस्कृतिक केंद्र, नई दिल्ली में हिंदी साहित्य निकेतन द्वारा प्रकाशित मनोज अबोध के दूसरे ग़ज़ल-संग्रह 'मेरे भीतर महक रहा है' का लोकार्पण हुआ। लोकार्पण डॉ॰ लक्ष्मीशंकर वाजपेयी (प्रसिद्ध ग़ज़लकार एवं आकाशवाणी, दिल्ली के केंद्र निदेशक), डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल (प्रसिद्ध साहित्यकार एवं केंद्रीय हिंदी संस्थान की अनुदान समिति के सदस्य), वरिष्ठ कवि/साहित्यकार एवं कार्यक्रम के अध्यक्ष श्री बालस्वरूप राही, श्री राजगोपाल सिंह (चर्चित मंचीय कवि) एवं प्रसिद्ध विद्वान श्री सर्वेश चंदौसवीं, श्रीमती रूबी मोहन्ती (वरिष्ठ उपसंपादक 'वनिता') एवं श्रीमती उर्मिल सत्यभूषण (अध्यक्षा-परिचय) ने किया।

ग़ज़ल-संग्रह पर हुई चर्चा के दौरान, मुख्य वक्ता के रूप में बोलते हुए ग़ज़ल के विद्वान श्री सर्वेश चंदौसवीं ने मनोज अबोध की ग़ज़लों पर समीक्षात्मक वक्तव्य दिया और कहा कि मनोज अबोध मुख्यत: सामाजिक सरोकारों के कवि हैं और प्रेमपथ पर चलकर ही सामाजिकता की ओर अग्रसर हुआ जा सकता है, डॉ॰ लक्ष्मीशंकर वाजपेयी ने मनोज अबोध को 'प्रेम का शायर' निरूपित करते हुए संग्रह से बहुत से प्रेमविषयक अशआर प्रस्तुत किए। कवि राजगोपाल सिंह ने मनोज अबोध के व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला। विशिष्ट अतिथि डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल ने अपने समीक्षात्मक आलेख के माध्यम से लौकिक से अलौकिक प्रेमाभिव्यक्ति की ओर बढ़ते कवि के क़दमों को कई ग़ज़लों का उदाहरण देते हुए सिद्ध किया। 'परिचय' के महासचिव श्री अनिल मीत ने मनोज अबोध के अनेक शेर प्रस्तुत किए।

इस अवसर पर साहित्यिक पत्रिका 'हंस' के कार्यकारी संपादक श्री संगम पांडेस, 'वनिता' की संपादक श्रीमती रश्मि कॉव, श्री अनमोल शुक्ल अनमोल (बिजनौर), डॉ॰ नीतू आस, श्रीमती मीना पांडे (मुख्य उपसंपादक वनिता), श्री प्रेमचंद सहजवाला, श्री आदेश त्यागी, श्री राजेश राज़ (गोरखपुर), श्री प्रदीप जैन, श्रीमती अर्चना गुप्ता, डॉ॰ बलजीत कौर 'तनहा', डॉ॰ रूपा सिंह, डॉ॰ नेहा 'आस', श्री एस॰एस॰ नंदा 'नूर', श्री रामौतार बैरवा, उस्तान शायर श्री सीमाब सुल्तानपुरी, श्री प्रशांतनारायण माथुर (नेशनल हैड ऑपरेशंस-एयरटेल) सहित बहुत से साहित्यकार, साहित्यप्रेमी मौजूद थे। कार्यक्रम का सफल संचालन 'परिचय साहित्य परिषद्' के महासचिव श्री अनिल 'मीत' ने किया।

अखिल भारतीय साहित्यकला मंच, मुरादाबाद (उ॰प्र॰) द्वारा काठमांडु (नेपाल) में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय हिंदी समारोह : 8 जून 2013 से 11 जून, 2013 तक

विगत 26 वर्षों से निरंतर हिंदीभाषा और साहित्य के संबर्द्धन एवं उन्नयन के लिए अखिल भारतीय साहित्यकला मंच, मुरादाबाद राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर के साहित्य-समारोह प्रत्येक वर्ष करता आ रहा है। अब मंच ने अपना 27वाँ वार्षिक साहित्य समारोह काठमांडु (नैपाल) में 8 जून, 2013 से 11 जून, 2013 तक आयोजित करने का निर्णय लिया है। इस समारोह में देश-विदेश के अनेकानेक हिंदी के विद्वान, साहित्य मर्मज्ञ, हिंदीसेवी शिक्षक, शिक्षिकाएँ, शिक्षार्थी, साहित्यकार, पत्रकार, संपादक आदि अपनी सहभागिता कर रहे हैं। आप हिंदी को समर्पित एक असाधारण व्यक्तित्व हैं। आप भी स्वयंसेवी आधार पर इस अंतर्राष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन में अपनी सहभागिता कर सकते हैं। इस अंतर्राष्ट्रीय हिंदी समारोह-2013 के मुख्य आकर्षण होंगे–

1. सन् 2013 में प्रकाशित कृतियों का लोकार्पण
2. अंतर्राष्ट्रीय हिंदी-संगोष्ठी
3. अंतर्राष्ट्रीय हिंदी काव्यगोष्ठी
4. साहित्यकार सम्मान 2013 का वितरण
5. काठमांडु के ऐतिहासिक, प्राकृतिक और सांस्कृतिक स्थलों का भ्रमण

कार्यक्रमानुसार सभी प्रतिभागी 8 जून, 2013 की प्रात: 7 बजे, शनिवार को नई दिल्ली के इंदिरा गांधी अंतर्राष्ट्रीय एयरपोर्ट पर अपने-अपने स्थलों से पहुँचेंगे। नई दिल्ली एयरपोर्ट से इसी दिन प्रात: 10:55 बजे विमान काठमांडु (नेपाल) के अंतर्राष्ट्रीय एयरपोर्ट के लिए उड़ान भरेगा। एयरपोर्ट काठमांडु (नेपाल) के परिसर में

एजेंसी की वातानुकूलित बसें मार्गदर्शक के साथ उपस्थित रहेंगी। इनके द्वारा सभी प्रतिभागी शंकर होटल (फोर स्टार) काठमांडु (नेपाल) में पहुँचेंगे, जहाँ पर 8 जून से 11 जून की प्रात: तक सबके लिए आवासीय और शाकाहारी भोजन एवं जलपान की व्यवस्था प्राप्त होगी।

तत्पश्चात् 9 जून, 2013 को प्रात: 9 बजे से 6 बजे सायं तक शंकर होटल के वातानुकूलित सुसज्जित विशाल सभागार में कार्यक्रमानुसार अंतर्राष्ट्रीय हिंदी-समारोह संपन्न होगा। रात्रि-विश्राम के उपरांत 10 जून, 2013 को वातानुकूलित बसों द्वारा मार्गदर्शकों के निर्देशन में सभी प्रतिभागी काठमांडु के प्राकृतिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक स्थलों का पूरे दिन भ्रमण करेंगे। पुन: रात्रि विश्राम के पश्चात् 11 जून, 2013 को प्रात: जलपान के उपरांत होटल चैक आउट करना है और पूर्व निर्धारित बसों के द्वारा श्री पशुपतिनाथ मंदिर काठमांडु के लिए प्रस्थान करना है। वहीं से बसों के द्वारा अंतर्राष्ट्रीय एयरपोर्ट काठमांडु में ठीक 11 बजे पहुँचेंगे; जहाँ से ठीक 2:00 बजे नई दिल्ली के लिए विमान उड़ान भरेगा। लगभग 4 बजे अपराह्न नई दिल्ली वापस पहुँच जाएँगे।

इस अंतर्राष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन में सहभागिता हेतु आपको भारतीय मुद्रा में 21000 रुपए की पंजीयन सहयोगराशि किसी भी राष्ट्रीयकृत बैंक द्वारा प्रदत्त मल्टीसिटी बैंक चैक के द्वारा डॉ महेश दिवाकर, मुरादाबाद के नाम देय क्रास्ड चैक के रूप में यथाशीघ्र भेजनी है। चैक के पीछे अपना नाम-पता और उद्देश्य अंकित अवश्य करें। यह पंजीयन सहयोग राशि एकमुश्त, पंजीयन आवेदन-पत्र के साथ 28 फरवरी, 2013 तक पंजीकृत डाक से प्रत्येक स्थिति में प्राप्त हो जानी चाहिए। पत्र-प्रेषण का पता है–

डॉ॰ महेश दिवाकर, संस्थापक अध्यक्ष
अखिल भारतीय साहित्य कला मंच
सरस्वती भवन, 12-मिलन विहार, दिल्ली राजमार्ग
मुरादाबाद 244001 (उ॰प्र॰)
मोबाइल : 09927383777, 09837263411

ध्यातव्य है कि समारोह हेतु प्राप्त धनराशि पंजीयन सहयोग राशि के रूप में है, जिसे किसी भी स्थिति में वापस नहीं किया जाएगा और न ही यह किसी अन्य प्रतिभागी के नाम स्थानांतरित होगी। अत: पूर्णरूपेण विचार करके ही अपनी पंजीयन/सहयोगराशि व पंजीयन आवेदन-पत्र पंजीकृत डाक से भिजवाएँ।

इस पंजीयन सहयोगराशि में 8 जून, 2013 को नयी दिल्ली अंतर्राष्ट्रीय एयरपोर्ट से काठमांडु एयरपोर्ट और पुन: 11 जून, 2013 को वापस काठमांडु एयरपोर्ट से नयी दिल्ली अंतर्राष्ट्रीय एयरपोर्ट तक आने-जाने का समग्र व्यय शामिल है। यथा–अंतर्राष्ट्रीय काठमांडु एयरपोर्ट से शंकर होटल काठमांडु बसों द्वारा जाना, पुन: बसों द्वारा काठमांडु पर्यटनस्थलों पर घूमना, वापस एयरपोर्ट काठमांडु पहुँचना, शंकर होटल में 8 जून, 2013 की अपराह्न से लेकर 11 जून, 2013 की प्रात: जलपान तक (चैक आउट होने से पूर्व) यथासमय जलपान और दोनों समय का विशुद्ध शाकाहारी भारतीय भोजन, पर्यटन-भ्रमण तथा समारोह-आयोजन का समग्र व्यय इसी राशि में शामिल है।

कृपया अपने पासपोर्ट अथवा भारतीय चुनाव आयोग द्वारा प्रदत्त मतदान परिचय-पत्र की कलर्ड छायाप्रति और अपना शैक्षिक साहित्यिक विवरण (बायोडाटा) तथा अपना एक कलर्ड छायाचित्र साथ भेजना न भूलें। नैपाल अथवा अन्य देशों से शामिल हिंदीसेवियों को पृथकश: आंशिक पंजीयन शुल्क देना होगा।

अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी का मुख्य विषय है–हिंदी का वैश्विक परिदृश्य। इसी प्रकार इसमें समाहित अन्य विषय हैं– 1. विश्व के विविध देशों में हिंदी की दशा व दिशा, 2. प्रवासी भारतीय साहित्यकारों का हिंदी को अवदान, 3. भारत के विविध प्रांतों में हिंदी का क्रमिक विकास, 4. सरकारी ग़ैरसरकारी साहित्यिक संस्थाओं का हिंदी को योगदान, 5. हिंदी पर भारतीय राजनीति का प्रभाव, 6 मुगलकाल में हिंदी, 7. अँग्रेज़ों के कार्यकाल में हिंदी, 8 विज्ञान और हिंदी, 9. चिकित्सा विज्ञान और हिंदी, 10. इंजीनियरिंग शिक्षा और हिंदी, 11. प्रबंधन शिक्षा और हिंदी, 12. हिंदी अनुवाद की दशा व दिशा, 13. हिंदी पत्रकारिता व दूरदर्शन, 14. हिंदी और भारतीय भाषाएँ, 15. हिंदी उत्थान कैसे हो?

कृपया अपना आलेख एक ओर डबल स्पेस में हिंदी देवनागरी लिपि में टंकण कराकर, त्रुटिरहित एक प्रति भेजें।

डॉ॰ लक्ष्मीनारायण गर्ग को 'संगीत विकास सम्मान-2012'

गत पाँच वर्षों में सर्वोत्तम संगीतशास्त्रीय लेखन के लिए समकालिक संगीतम् द्वारा संचालित 'चतुर्थ संगीत विकास सम्मान-2012' संगीत की प्रसिद्ध पत्रिका 'संगीत' के संपादक और अनेकानेक संगीत-ग्रंथों के लेखक डॉ॰ लक्ष्मीनारायण गर्ग को उनकी कृति 'बृजसंस्कृति और लोकसंगीत' के लिए प्रदान किया गया। कार्यक्रम का आयोजन 12 दिसंबर 2012 को कोज़िकोडे (केरल) में किया गया, जिसमें ज्ञानपीठ सम्मान प्राप्त पद्मभूषण श्री एम॰टी॰ वासुदेवन नायर मुख्य अतिथि थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रसिद्ध इतिहासविद् एवं आई॰सी॰एच॰आर॰ नई दिल्ली के पूर्व अध्यक्ष श्री एम॰जी॰एस॰ नारायणन् ने की। डॉ॰ लक्ष्मीनारायण गर्ग की अनुपस्थिति में यह पुरस्कार उनकी पुत्री श्रीमती मधु अग्रवाल ने प्राप्त किया।

पत्रकारिता का बदलता स्वरूप और न्यू मीडिया

डॉ॰ हरीश अरोड़ा द्वारा संपादित पुस्तक 'ग्लोबल मीडिया और हिंदी पत्रकारिता' प्रकाशित होकर आ चुकी है। जल्दी ही 'पत्रकारिता का बदलता स्वरूप और न्यू मीडिया' को केंद्र में रखकर दो पुस्तकों का संपादनकार्य आरंभ हो चुका है। डॉ॰ हरीश अरोड़ा ने अनुरोध किया है कि यदि आप उपर्युक्त विषय पर अपना कोई आलेख प्रकाशन के लिए देना चाहते हैं तो उन्हें drharisharora @gmail.com पर प्रेषित कर सकते हैं। प्रकाशित आलेखों के लेखकों को पुस्तक की एक प्रति उपहारस्वरूप भेंट की जाएगी। आलेख 20 फरवरी, 2013 तक प्राप्त हो जाने चाहिए।

'हिंदी साहित्य निकेतन शोध पुरस्कार'

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

हिंदी साहित्य निकेतन देश का ऐसा विशिष्ट संस्थान है, जो हिंदी-शोध की दिशा में विशेष रूप से सक्रिय है। इस संस्थान ने अभी तक हिंदी में संपन्न शोध की पूरी सूचनाएँ लगभग 3000 पृष्ठों के पाँच खंडों में प्रकाशित की हैं।

हिंदी साहित्य निकेतन की ओर से उसकी स्वर्णजयंती के अवसर पर प्रकाशित शोध-प्रबंधों पर 'हिंदी साहित्य निकेतन शोध पुरस्कार' देने की घोषणा की गई है।

नियम एवं शर्तें-

1. पुरस्कार की राशि 25000 रुपए होगी।
2. पुरस्कार हेतु पिछले तीन वर्षों में (2009 तथा बाद के) प्रकाशित शोध-प्रबंध स्वीकार्य होंगे।
3. शोध-प्रबंधों की तीन प्रतियाँ (निर्मूल्य) पंजीकृत डाक से भेजनी होंगी।
4. पुरस्कार का निर्णय विद्वानों की एक समिति द्वारा किया जाएगा।
5. प्रविष्टि भेजते समय किसी भी पुस्तक पर अपना विवरण न लिखें, न ही हस्ताक्षर करें।
6. प्रविष्टि भेजने की अंतिम तिथि अभी घोषित नहीं की गई है।
7. निर्णायक मंडल द्वारा किया गया निर्णय अंतिम तथा सभी को स्वीकार्य होगा।
8. पुरस्कार-हेतु भेजे जाने वाले शोध-प्रबंधों के पैकिट पर सबसे ऊपर 'शोध-पुरस्कार हेतु' अवश्य लिखा जाए।
9. समस्त प्रविष्टियाँ निम्न पते पर प्रेषित की जाएँ-

हिंदी साहित्य निकेतन

16 साहित्य विहार, बिजनौर (उ॰प्र॰) 246701

ऋषि गौड़
8 नवंबर 1950
20 जुलाई 2012

पुण्य स्मरण

ऐसा बिछुड़ा मैं तुझसे कि फिर से कभी
मिलना होगा, असंभव हुआ हर सपन।
मेरे मन के हर एक कोण में तू छिपा
फिर भी प्यासा ये मन, भोगता है तपन।
मेरे संकल्प-पथ का बना कल्प तू
साधना का दिया तू जलाता रहा।

मेरा भाई था तू, मेरा साथी भी था
मेरा अपना सगा, मेरा उपहार था।
मेरे संघर्ष में तू सदा साथ था
मेरे मन में बसा तू सलाहकार था।
जब मिला तो दिलासा हमेशा दिया
आगे बढ़ने के गुर तू सिखाता रहा।

तेरे मन में भरी थी अजब-सी चुभन
पर सृजन को समर्पित रहा हर घड़ी।
अपने दामन के आँसू छिपाकर कहाँ
खो गया, आ भी जा, ज़िंदगी रो पड़ी।
किसको क्या-क्या दिया,
किससे क्या-भर लिया
छटपटाता रहा, गीत गाता रहा।

–गिरिराजशरण अग्रवाल

साहित्यिक क्षति 2012

श्री द्रोणवीर कोहली	24 जनवरी
श्री सुकुमार (मलयालम)	24 जनवरी
श्री कर्तारसिंह दुग्गल (पंजाबी)	26 जनवरी
श्री विद्यासागर नौटियाल	12 फरवरी
श्री शहरयार (उर्दू)	13 फरवरी
श्री सुखवीर (पंजाबी)	22 फरवरी
डॉ॰ प्रेमचंद गोस्वामी	14 मार्च
श्री रमेशचंद्र श्रीवास्तव (कानपुर)	6 अप्रैल
श्री मोहित चट्टोपाध्याय (बँगला)	12 अप्रैल
श्री नित्यानंद महापात्र (उड़िया)	17 अप्रैल
श्री गजानन वर्मा (राजस्थानी)	17 मई
श्री भागवत रावत (म॰प्र॰)	25 मई
श्री अमर गोस्वामी	28 जून
डॉ॰ गोतम सचदेव	30 जून
श्री सुरेश दलाल (गुजराती)	10 अगस्त
श्रीमती रामकुमारी मिश्र	1 सितंबर
श्री रामशरण शर्मा मुंशी	4 अक्टूबर
रजिया बट (उर्दू)	4 अक्टूबर
श्री श्रीप्रसाद	12 अक्टूबर
प्रो॰ सुनील गंगोपाध्याय	23 अक्टूबर
श्रीमती अंगूरीदेवी	29 अक्टूबर
मरुधर मृदुल (जोधपुर)	29 अक्टूबर
रिज़वान जहीर उस्मान (रंगकर्मी)	3 नवंबर
डॉ॰ देवेंद्र इस्सर	6 नवंबर
पं॰ लल्लनप्रसाद व्यास	12 नवंबर
श्रीमती कमला सदागोपन (तमिल)	14 नवंबर
श्री कामतानाथ	7 दिसंबर

2012 में जहाँ साहित्य और संस्कृति जगत् के अनेक महारथियों ने हमारी आँखों को अश्रुपूरित किया, वहीं हमारे शोध-दिशा परिवार के कुछ साथी भी हमें छोड़कर चले गए। इनमें श्री महेंद्रकुमार जैन (बिजनौर) तथा श्री ज्ञानदेव अग्रवाल (बिजनौर) को भुला पाना बहुत मुश्किल है। शोध-दिशा परिवार इन दोनों के प्रति अपनी अश्रुपूरित श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

हिन्दी साहित्य निकेतन

16 साहित्य विहार, बिजनौर (उ॰प्र॰)

फोन : 01342-263232, 07838090732

ई-मेल :
giriraj3100@gmail.com
giriraj@hindisahityaniketan.com

वेबसाइट :
www.hindisahityaniketan.com

महत्त्वपूर्ण कोश एवं संदर्भ ग्रंथ

निश्तर ख़ानक़ाही एवं डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल
ग़ज़ल और उसका व्याकरण 150.00

डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल एवं डॉ॰ मीना अग्रवाल
हिंदी साहित्यकार संदर्भ कोश : भाग-1 495.00
हिंदी साहित्यकार संदर्भ कोश : भाग-2 700.00
हिंदी शोध के नए प्रतिमान 800.00
हिंदी शोध : नई दृष्टि 800.00
शोधसंदर्भ-भाग-1 500.00
शोधसंदर्भ-भाग-2 550.00
शोधसंदर्भ-भाग-3 525.00
शोधसंदर्भ-भाग-4 595.00
शोधसंदर्भ-भाग-5 895.00
हिंदी तुकांत कोश 300.00
शोध अंक भाग-1 100.00
शोध अंक भाग-2 100.00
शोध अंक भाग-3 100.00
शोध अंक भाग-4 100.00
शोध अंक भाग-5 100.00
शोध अंक भाग-6 100.00
शोध अंक भाग-7 100.00
शोध अंक भाग-8 100.00
शोध अंक भाग-9 100.00
शोध अंक भाग-10 100.00
शोध अंक भाग-11 100.00
शोध अंक भाग-12 100.00
शोध अंक भाग-13 100.00
शोध अंक भाग-14 100.00
शोध अंक भाग-15 100.00
शोध अंक भाग-16 100.00
शोध अंक भाग-17 150.00
शोध अंक भाग-18 200.00
शोध अंक भाग-19 200.00
शोध अंक भाग-20 200.00

समीक्षा एवं समालोचना

डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल
सवाल साहित्य के 200.00

डॉ॰ अंजु भटनागर
डॉ॰ कुँअर बेचैन के साहित्य में प्रतीक विधान 500.00

डॉ॰ ज्योति सिंह
मृदुला गर्ग कृत अनित्य : इतिहास और आख्यान का संबंध 150.00
मृदुला गर्ग और नारी-अस्मिता का प्रश्न 300.00

डॉ॰ मिथिलेश माहेश्वरी
काका हाथरसी : एक समीक्षा-यात्रा 300.00

डॉ॰ मनोज कुमार
सांप्रदायिकता और हिंदी कथासाहित्य 250.00

डॉ॰ दीपा के॰
अपनी कविताओं में अशोक चक्रधर 250.00

डॉ॰ मीना अग्रवाल
आधुनिक हिंदी गीतिकाव्य में संगीत (पुरस्कृत) 450.00

डॉ॰ हरीशकुमार सिंह
डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल : व्यक्ति और साहित्य 350.00

साठोत्तरी हिंदी-ग़ज़ल : डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल का योगदान/डॉ॰ अनिलकुमार शर्मा 350.00

एक साक्षात्कार : पं॰ अमृतलाल नागर के साथ डॉ॰ शंकर क्षेम 150.00

ग़ज़ल : सौंदर्य और यथार्थ/अनिरुद्ध सिन्हा 150.00

समय के हस्ताक्षर (हिंदी के आधुनिक कवि) डॉ॰ ज्योति व्यास 150.00

कालिदास के साहित्य में भौगोलिक तत्त्व डॉ॰ लालबहादुर रावल 300.00

जनपद बिजनौर के आधुनिककालीन साहित्यकार डॉ॰ अशोककुमार 350.00

बिजनौर क्षेत्र की ग्रामोद्योग-संबंधी शब्दावली का अध्ययन/डॉ॰ ओमदत्त आर्य 500.00

आस्थावाद एवं अन्य निबंध डॉ॰ मिथिलेश दीक्षित300.00

साहित्य और संस्कृति/डॉ॰ मिथिलेश दीक्षित 300.00

हास्य-निबंध : स्वतंत्रता के बाद/ डॉ॰ आशा रावत 350.00

आज़ादी के बाद का हिंदी गद्य व्यंग्य डॉ॰ प्रेम जनमेजय 500.00

हिंदी बालकाव्य के विविध पक्ष/विनोदचंद्र पांडेय 300.00

हिंदी बालसाहित्य : डॉ॰ सुरेंद्र विक्रम का योगदान डॉ॰ स्वाति शर्मा 450.00

वादविवाद प्रतियोगिता : पक्ष और विपक्ष 200.00
डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल, डॉ॰ मीना अग्रवाल

फिजी में प्रवासी भारतीय/डॉ॰ शुचि गुप्ता 300.00

मुक्तिबोध का रचना-संसार/डॉ॰ शिवशंकर लधवे 200.00

भीष्म साहनी का कथासाहित्य सांप्रदायिक सद्भाव/डॉ॰ पी॰आर॰ वासुदेवन 250.00

हिंदी ब्लॉगिंग : अभिव्यक्ति की नई क्रांति / अविनाश वाचस्पति, रवींद्र प्रभात 450.00

हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास/रवींद्र प्रभात 300.00

साठोत्तरी हिंदी रेखाचित्र : शैलीवैज्ञानिक अध्ययन/ मीनल रश्मि 250.00

हास्य-व्यंग्य

डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल

मेरी हास्य-व्यंग्य कविताएँ 150.00

मेरे इक्यावन व्यंग्य 300.00

चुनी हुई हास्य कविताएँ 250.00

बाबू झोलानाथ 60.00

राजनीति में गिरगिटवाद 100.00
महेशचंद्र द्विवेदी

भज्जी का जूता 150.00

क्लियर फंडा 120.00

प्रिय-अप्रिय प्रशासकीय प्रसंग 170.00
पं॰ सूर्यनारायण व्यास, सं॰ राजशेखर व्यास

वसीयतनामा 150.00

नो टेंशन/डॉ॰ सुरेश अवस्थी 170.00

काका की विशिष्ट रचनाएँ/काका हाथरसी 300.00

काका के व्यंग्य-बाण/काका हाथरसी 300.00

कक्के के छक्के/काका हाथरसी 200.00

लूटनीति मंथन करी/काका हाथरसी 200.00

खिलखिलाहट/काका हाथरसी 200.00

पैसे कहाँ से दें/डॉ॰ आशा रावत 200.00

चाहिए एक और भगतसिंह/डॉ॰ आशा रावत 100.00

नमस्कार प्रजातंत्र/महेश राजा 150.00

ए जी सुनिए/अशोक चक्रधर 100.00

इसलिए बौड़म जी इसलिए/अशोक चक्रधर 100.00

चुटपुटकुले/अशोक चक्रधर 60.00

तमाशा/अशोक चक्रधर 60.00

रंग जमा लो/अशोक चक्रधर 65.00

सो तो है/अशोक चक्रधर 60.00

हँसो और मर जाओ/अशोक चक्रधर 60.00

नमस्ते जी/डॉ॰ बलजीत सिंह 150.00

अब हँसने की बारी है/डॉ॰ बलजीत सिंह 200.00

डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल

1996 **की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएँ** 100.00

1997 **की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएँ** 100.00

1998 **की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएँ** 100.00

1999 **की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएँ** 120.00

2002 **की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएँ** 150.00

2003 **की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएँ** 150.00

2004 **की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएँ** 170.00

पिछले दशक की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य कहानियाँ 100.00

पिछले दशक की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य कविताएँ 200.00

पिछले दशक के श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य एकांकी 100.00

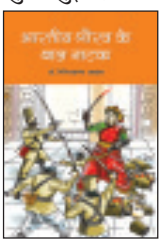

डॉ॰ शिव शर्मा

शिवशर्मा के चुने हुए व्यंग्य 50.00
बजरंगा (व्यंग्य-उपन्यास) 150.00
अपने-अपने भस्मासुर 150.00
प्रतिनिधि व्यंग्य/दामोदरदत्त दीक्षित 100.00
हास्य-व्यंग्य : मधुप पांडेय के संग/ मधुप पांडेय 200.00
धमकीबाज़ी के युग में/निश्तर ख़ानक़ाही 60.00
ला ख़र्चा निकाल/गजेंद्र तिवारी 200.00
जलनेवाले जला करें/गजेंद्र तिवारी 60.00
कवयित्री सम्मेलन/ सुरेंद्रमोहन मिश्र 100.00
पेट में दाढ़ियाँ हैं/सूर्यकुमार पांडेय 100.00
ये है इंडिया/डॉ॰ हरीशकुमार सिंह 120.00
आँखों देखा हाल/डॉ॰ हरीशकुमार सिंह 150.00
लिफ़्ट करा दे/डॉ॰ हरीशकुमार सिंह 200.00
देवेंद्र के कार्टून/देवेंद्र शर्मा 80.00
कार्टून कौतुक/देवेंद्र शर्मा 120.00
लिफ़ाफ़े का अर्थशास्त्र/डॉ॰ पिलकेंद्र अरोरा 120.00

कहानी

डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल

जिज्ञासा और अन्य कहानियाँ 200.00
छोटे-छोटे सुख 200.00
कथा जारी है/बाबूसिंह चौहान 150.00
इक्कीस कहानियाँ/ सत्यराज 100.00

डॉ॰ मीना अग्रवाल

अंदर धूप बाहर धूप (नारी-मन की कहानियाँ) 150.00

डॉ॰ दिनेशचंद्र बलूनी

उत्तराखंड की लोकगाथाएँ 200.00
एक बौना मानव/महेशचंद्र द्विवेदी 100.00
लव जिहाद/महेशचंद्र द्विवेदी 200.00
हैं आस्माँ कई और भी/ नीरजा द्विवेदी 200.00
कौन कितना निकट/रेणु 'राजवंशी' गुप्ता 120.00
लघु कथाएँ/डॉ॰ हरिशरण वर्मा 150.00

उपन्यास

अनोखा उपहार/ सुषमा अग्रवाल 200.00
आसरा/ सुषमा अग्रवाल 100.00
तीन बीघा ज़मीन/ सुषमा अग्रवाल 200.00
मन के जीते जीत/ सुषमा अग्रवाल 200.00
कालचक्र से परे/नीरजा द्विवेदी 200.00
भीगे पंख/महेशचंद्र द्विवेदी 200.00
मानिला की योगिनी/महेशचंद्र द्विवेदी 200.00
और लहरें उफनती रहीं/डॉ॰ तारादत्त निर्विरोध 200.00
बजरंगा (व्यंग्य-उपन्यास)/डॉ॰ शिव शर्मा 150.00
अराज-राज/डॉ॰ मोहन गुप्त 200.00
सुराज-राज/डॉ॰ मोहन गुप्त 350.00
एक गुमनाम फौजी की डायरी/डॉ॰ आशा रावत 150.00
एक चेहरे की कहानी/डॉ॰ आशा रावत 150.00
गुरुदक्षिणा (व्यंग्य-उपन्यास)/डॉ॰ आशा रावत 100.00
इतिहास की आवाज़/डॉ॰ राजेन्द्र मिश्र 450.00

एकांकी-नाटक

डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल

बच्चों के हास्य नाटक 200.00
बच्चों के रोचक नाटक 200.00
बच्चों के शिक्षाप्रद नाटक 200.00
बच्चों के अनुपम नाटक 200.00
बच्चों के उत्तम नाटक 200.00
भारतीय गौरव के बाल नाटक 200.00
प्रेमचंद की कहानियों पर आधारित नाटक 300.00
ग्यारह नुक्कड़ नाटक 200.00
नीली आँखें 60.00
संसार : एक नाट्यशाला/बाबूसिंह चौहान 150.00
ग्यारह एकांकी/डॉ॰ हरिशरण वर्मा 200.00
दमन/रामाश्रय दीक्षित 100.00
स्वप्न पुरुष/डॉ॰ उर्मिला अग्रवाल 150.00

ललित निबंध एवं रेखाचित्र

कैसे-कैसे लोग मिले/निश्तर ख़ानक़ाही 125.00
यादों का मधुबन/कृष्ण राघव 150.00
समय के चाक पर/डॉ॰ लालबहादुर रावल 125.00
समय एक नाटक/डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल 200.00
दर्पण झूठ बोलता है/बाबूसिंह चौहान 60.00
मकड़जाल में आदमी/बाबूसिंह चौहान 80.00
उफनती नदियों के सामने/बाबूसिंह चौहान 100.00
पीठ पर नील गगन/बाबूसिंह चौहान 100.00

अनुभव के पंख/चंद्रवीरसिंह गहलौत 250.00
मेरे साक्षात्कार/डॉ॰ बालशौरि रेड्डी 250.00
संवाद साहित्यकारों से/डॉ॰ गंगाप्रसाद गुप्त बरसैंया 250.00

गीत-ग़ज़ल

निश्तर ख़ानक़ाही
निश्तर ख़ानक़ाही समग्र (प्रकाशनाधीन) 500.00
मोम की बैसाखियाँ (ग़ज़ल-संग्रह) 50.00
ग़ज़ल मैंने छेड़ी (ग़ज़ल-संग्रह) 80.00
ग़ज़लों के शहर में (ग़ज़ल-संग्रह) 200.00
मेरे लहू की आग (ग़ज़ल-संग्रह) 150.00
डॉ॰ कुँअर बेचैन
कोई आवाज़ देता है 150.00
दिन दिवंगत हुए 150.00
कुँअर बेचैन के नवगीत 200.00
कुँअर बेचैन के प्रेमगीत 150.00
पर्स पर तितली (हाइकु) 200.00
रमेश पोखरियाल 'निशंक'
मातृभूमि के लिए 200.00
संघर्ष जारी है 170.00
जीवन-पथ में 150.00
देश हम जलने न देंगे 150.00
तुम भी मेरे साथ चलो 150.00
शमा हर रंग में जलती है/रामेश्वरप्रसाद 150.00
डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल
अक्षर हूँ मैं (कविताएँ) 150.00
सन्नाटे में गूँज (ग़ज़ल-संग्रह) 200.00
भीतर शोर बहुत है (ग़ज़ल-संग्रह) 200.00
मौसम बदल गया कितना (ग़ज़ल-संग्रह) 100.00
रोशनी बनकर जिओ (ग़ज़ल-संग्रह) 150.00
शिकायत न करो तुम (ग़ज़ल-संग्रह) 150.00
आदमी है कहाँ (ग़ज़ल-संग्रह) 200.00
प्रतिनिधि ग़ज़लें (ग़ज़ल-संग्रह) 200.00
आदमी के हक़ में (ग़ज़लें)/रामगोपाल भारतीय 100.00
यहाँ तक वहाँ से (कविताएँ)/रमेश कौशिक 200.00
हास्य नहीं व्यंग्य (कविताएँ)/रमेश कौशिक 150.00
गांधारी का सच (खंडकाव्य)/आर्यभूषण गर्ग 200.00
डॉ॰ आकुल
राधेय (खंडकाव्य) 120.00
असित चंद्र : अवदात चंद्रिका (काव्य-नाटक) 120.00
जिंदगी गाती तो है/(ग़ज़ल-संग्रह) 120.00
आसमान मेरा भी है (ग़ज़लें)/किशनस्वरूप 100.00
बूँद-बूँद सागर मैं (ग़ज़ल-संग्रह)/किशनस्वरूप 100.00
कर्नल तिलकराज
आँचल-आँचल खुशबू (ग़ज़ल-संग्रह) 100.00
ज़ख़्म खिलने को हैं (ग़ज़ल-संग्रह) 100.00
अग्निसुता/राजेंद्र शर्मा 150.00
सीतायनी/डॉ॰ शंकर क्षेम 150.00
हिरना लौट चलें (गीत-संग्रह)/शचींद्र भटनागर 150.00
तिराहे पर (ग़ज़ल-संग्रह)/शचींद्र भटनागर 150.00
ढाई आखर प्रेम के (गीत-संग्रह)/शचींद्र भटनागर 200.00
अखंडित अस्मिता (मुक्तक)/शचींद्र भटनागर 200.00
गुलमुहर की छाँव में (ग़ज़लें)/मनोज अबोध 100.00
मेरे भीतर महक रहा है (ग़ज़लें)/मनोज अबोध 150.00
उजियारा आशाओं का/तारा प्रकाश 150.00
बुलंदी इरादों की/तारा प्रकाश 150.00
चलने से मंज़िल मिलती है/तारा प्रकाश 200.00
इंद्रधनुष/तारा प्रकाश 200.00
संवेदनाओं के रंग/तारा प्रकाश 200.00
सुरों के ख़त/अश्विनीकुमार 'विष्णु' 100.00
सुनहरे मंत्र का जादू/अश्विनीकुमार 'विष्णु' 100.00
सुनते हुए ऋतुगीत/अश्विनीकुमार 'विष्णु' 150.00
सुबह की अँगूठी/अश्विनीकुमार 'विष्णु' 150.00
डॉ॰ मीना अग्रवाल
सफ़र में साथ-साथ (मुक्तक-संग्रह) 150.00
जो सच कहे (हाइकु-संग्रह) 150.00
यादें बोलती हैं (कविताएँ) 200.00
एक मुट्ठी धूप/नीरजा सिंह 100.00
कटे हाथों के हस्ताक्षर/डॉ॰ कमल मुसद्दी 150.00
फ़ासले मिट जाएँगे (ग़ज़लें)/डॉ॰ बलजीत सिंह 150.00
शब्द-शब्द संदेश (दोहे)/डॉ॰ बलजीत सिंह 150.00
जीवन है मुस्कान (दोहे)/डॉ॰ बलजीत सिंह 150.00
भीतर का संगीत (दोहे)/डॉ॰ बलजीत सिंह 200.00
सुख के बिरवे रोप (दोहे)/डॉ॰ बलजीत सिंह 200.00

इंद्रधनुष के रंग (दोहे)/डॉ॰ बलजीत सिंह 200.00
डॉ॰ योगेंद्रनाथ शर्मा 'अरुण'
बहती नदी हो जाइए (ग़ज़ल-संग्रह) 150.00
अँधियारों से लड़ना सीखें (ग़ज़ल-संग्रह) 200.00
जीवन-अमृत : पर्यावरण चेतना (दोहा-संग्रह) 200.00
अक्षर-अक्षर हो अमर (दोहा-संग्रह) 200.00
वैदुष्यमणि विद्योत्तमा (खंडकाव्य) 200.00
अनजाने आकाश में/महेशचंद्र द्विवेदी 170.00
बातें कुछ अनकही/सत्येंद्र गुप्ता 200.00
मैंने देखा है/सत्येंद्र गुप्ता 200.00
हौसला तो है/सत्येंद्र गुप्ता 200.00
ज़िंदगी रुकती नहीं/सत्येंद्र गुप्ता 200.00
जज़्बात की धूप/धूप धौलपुरी 250.00
आड़ी-तिरछी यादों-सा कुछ/नवलकिशोर शर्मा 180.00
जब चाँद डूब रहा था/नवलकिशोर शर्मा 200.00
एड्स शतक/पूरनसिंह सैनी 150.00
खोजें जीवन सत्य (दोहे)/डॉ॰ ओमदत्त आर्य 150.00
अपनी एक लकीर (दोहे)/डॉ॰ ओमदत्त आर्य 200.00
राष्ट्र-शक्ति/सलेकचंद संगल 150.00
माँ तुझे प्रणाम/सलेकचंद संगल 150.00
लहरों के विरुद्ध/डॉ॰ रामप्रकाश 200.00
हर वृक्ष महाबोधि नहीं होता/महेंद्र कुमार 200.00
समय के भूगोल में/राजेंद्र मिश्र 200.00
पीड़ा का राजमहल/डॉ॰ उर्मिला अग्रवाल 200.00
मैं एक समुद्र/डॉ॰ तारादत्त निर्विरोध 200.00
उड़ान जारी है/विनोद भृंग 200.00
कहता कुछ मौन/हरिराम 'पथिक' 200.00
रात/दामोदर खड़से 150.00
सूर्यनगर की चाँदनी/रामेश्वर वैष्णव 150.00

आत्मकथा-संस्मरण

मेरा जीवन : ए-वन/काका हाथरसी 100.00
आत्मसरोवर/ओम्प्रकाश अग्रवाल 125.00
निष्ठा के शिखर-बिंदु/नीरजा द्विवेदी 200.00
सफ़र साठ साल का/डॉ॰अजय जनमेजय (सं) 400.00
गीतिका गोयल, अनुभूति भटनागर (संपादक)
यादों की गुल्लक 300.00
आधी हक़ीक़त आधा फ़साना/डा॰ बलजीतसिंह 150.00
उत्तरोत्तर/डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल (सं॰) 700.00

बाल-साहित्य

धरती पर चाँद (पुरस्कृत)/शंभूनाथ तिवारी 150.00
हम बगिया के फूल (बालगीत)/डॉ॰ बलजीतसिंह 150.00
आओ गीत सुनाओ गीत/डॉ॰बलजीतसिंह 150.00
छुट्टी के दिन बड़े सुहाने/डॉ॰बलजीतसिंह 200.00
दिन बचपन के (बालगीत)/डॉ॰बलजीतसिंह 200.00
जादूगर बादल (बालगीत)/विनोद भृंग 150.00
आटे-बाटे दही चटाके (शिशुगीत)/बालकृष्ण गर्ग 150.00
चुनमुन की कहानियाँ (पुरस्कृत)/गीतिका गोयल 150.00
किशोर मन की कहानियाँ/डॉ॰ सरला अग्रवाल 150.00
चलो आकाश को छू लें/डॉ॰ तारादत्त निर्विरोध 200.00
मानव-विकास की कहानी/डॉ॰ गिरिराजशरण 200.00
पार्टी गेम्स/चाँदनी कक्कड़ 125.00

विविध

उत्तराखंड में आध्यात्मिक पर्यटन/
डॉ॰ सरिता शाह 200.00
निश्तर ख़ानक़ाही, डॉ॰ गिरिराजशरण, डॉ॰ मीना अग्रवाल
पर्यावरण : दशा और दिशा (पुरस्कृत) 300.00
नारी : कल और आज 200.00
निश्तर ख़ानक़ाही, डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल
विश्व आतंकवाद : क्यों और कैसे 125.00
हिंसा : कैसी-कैसी 200.00
रमेशचंद्र दीक्षित, निश्तर ख़ानक़ाही, डॉ॰ गिरिराजशरण
मानवाधिकार : दशा और दिशा (पुरस्कृत) 300.00
गुरु नानकदेव/डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल 200.00
वेद-वेदान्त दर्शन/डॉ॰ मूलचन्द दालभ 300.00
प्रकृति : एक ज्ञेय तत्त्व/डॉ॰ मूलचन्द दालभ 300.00
कन्हैया गीता/डॉ॰ मूलचन्द दालभ 900.00
मैं हरिद्वार बोल रहा हूँ/डॉ॰ कमलकांत बुधकर 395.00
डॉ॰ गोविंद शर्मा एवं रवि लंगर
टास्कफोर्स : हैल्थकेयर प्रोजेक्ट्स 450.00
सिद्धाश्रम का संन्यासी/मनोज भारद्वाज 300.00
समुद्री दैत्य सुनामी/डॉ॰ लालबहादुर रावल 300.00